श्री एस. आर. कपूर ने कपूर ब्रदर्स लिमिटिड
१६ ए/२ करोल बाग, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित किया।

[सर्वाधिकार सुरक्षित]

कोरोनेशन प्रिंटिंग वर्क्स
फतहपुरी दिल्ली, द्वारा मुद्रित।

हिन्दी

साहित्य परिचय

पुस्तक ३

कपूर ब्रदर्स लिमिटिड
१६ ए/२ करोल बाग नई दिल्ली, बम्बई

हिन्दी

साहित्य परिचय

पुस्तक ३

कपूर ब्रदर्स लिमिटिड
१६ ए/२ करोल बाग नई दिल्ली, बम्बई

प्रस्तावना

यह 'पुस्तक-माला' शिक्षाविभाग द्वारा निर्धारित नवीन और संशोधित पाठ्य-क्रम के अनुसार मिडिल स्कूलों की छठी, सातवीं और आठवीं कक्षाओं के लिए तैयार की गई है।

पाठों का चुनाव इस दृष्टि से किया गया है कि बालक-बालिकाओं दोनों के लिए उपयुक्त हों। साथ ही पाठों के चुनाव, लेखन और सम्पादन में मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विद्यार्थियों की रुचि, अवस्था तथा बौद्धिक विकास का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। इन पाठों को पढ़ते समय विद्यार्थियों में नवीन आशा, स्फूर्ति, साहस और आत्म-त्याग की भावना जागृत होगी। उनका ज्ञान बढ़ेगा और उनके हृदय में उच्च-आदर्श एवं उदार भावों के प्रति निष्ठा उत्पन्न होगी। पाठों के संकलन और क्रम में हमने इस बात की ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया है कि उनकी भाषा सरस और मुहावरेदार हो। प्रारम्भ के पाठों में सरलता पर विशेष ध्यान दिया गया है और चेष्टा की गई है कि उत्तरोत्तर भाषा और विषय में भी क्रमिक विकास होता चले। साथ ही साथ विद्यार्थियों में जिज्ञासा और कुतूहल की वृत्ति उद्दीप्त होती रहे और उनके मन में अधिकाधिक उत्सुकता के साथ पाठों को पढ़ने की अभिलाषा उत्पन्न हो।

पुस्तक के अधिकांश पाठ हिंदी-साहित्य के सर्वमान्य लेखकों और कवियों की उन रचनाओं से संकलित किये गए हैं जो इस कक्षा के विद्यार्थियों के लिए सर्वथा उपयुक्त हों।

'विविधता में ही जीवन का रस है' इस मनोवैज्ञानिक तथ्य के अनुसार इस 'पुस्तक-माला' में कहानी, काव्य, निबंध, साहसपूर्ण घटना, आविष्कार और अनुसंधान, यात्रा, संस्मरण, जीवन-चरित्र, आत्म-चरित्र, राजनीति, समाज तथा संस्कृति, शिष्टाचार, स्वास्थ्य, सामान्य-विज्ञान, चरित्र-निर्माण, प्राकृतिक दृश्य-वर्णन, ग्राम्यजीवन, नाटक—सभी का सुन्दर सम्मिश्रण किया गया है।

हम यह निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि यह 'पुस्तक-माला' विद्यार्थियों सच्चरित्र की गहरी नींव डालने—शील, सौजन्य, अनुशासन, निर्भयता, उदारता और निष्ठा एवं संयम की भावना जागृत करने में सहायक होगी।

प्रत्येक पाठ के अन्त में उस पाठ से सम्बन्धित, साधारण ज्ञान से सम्बंधित तथा व्याकरण से सम्बन्धित प्रश्न भी दिये गए हैं। आवश्यकतानुसार अलंकार सम्बन्धी प्रश्न भी दिये गए हैं। इन प्रश्नों में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि वे दुर्बोध न होने पाएं, जिसके कारण विद्यार्थी को उनसे अरुचि हो।

इस 'माला' में जिन महानुभाव लेखकों की रचनाओं को पिरोया है, उनका संक्षिप्त परिचय पुस्तक के अन्त दे दिया गया है।

पाठों की विषय-वस्तु को चित्रों द्वारा व्यक्त करके रुचिकर बनाने की चेष्टा की गई है

अन्त में हम उन समस्त विद्वान् लेखकों और कवियों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं, जिनकी अमूल्य रचनाओं को हमने अपनी इस 'पुस्तक-माला' में स्थान दिया है।

—सम्पादक

विषय-सूची

संख्या	पाठ	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	देश गीत	(कविता)	सुधीन्द्र	६
२.	बन्दी शिवा	(ऐतिहासिक कहानी)	श्रीकृष्ण मोहन	११
३.	शिक्षा का उद्देश्य	(व्याख्यात्मक)	महात्मा गांधी	२०
४.	कांटा और फूल	(कविता)	अयोध्यासिंह उपाध्याय	२५
५.	एक प्रश्न चार उत्तर	(नागरिक शास्त्र)	श्रीप्रकाश	२७
६.	गांधी जी की जीवन झाँकियां	(जीवनझाँकी)	रामनाथ 'सुमन'	३३
७.	किसान	(कविता)	मुकुटधर पाण्डे	४२
८.	दीपावली	(सांस्कृतिक)	काका कालेलकर	४५
९.	चरित्र-संगठन	(चरित्र-निर्माण)	श्री गुलाबराय एम० ए०	४६
१०.	मेघ	(कविता)	चक्रधर बहुगुना	५७
११.	नमक का दारोगा	(कहानी)	प्रेमचन्द	६१
१२.	छात्र के कर्त्तव्य	(कविता)	गोपालशरणसिंह	७३
१३.	इंग्लिस्तान की पाठशालाओं में आत्म-शासन की शिक्षा कैसे दी जाती है ?	(शिक्षाविज्ञान)	डा० लज्जाशंकर झा	७६
१४.	नालन्दा विश्वविद्यालय	(अतीत गौरव)	संकलित	७५
१५.	गीत	(कविता)	गोपालशरणसिंह	६४
१६.	माउंट एवरेस्ट की चढ़ाई	(दुःसाहसिक यात्रा)	संकलित	६६
१७.	रुपया	(आत्मवृत्त)	पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'	१०५
१८.	सूर के पद	(कविता)	सूरदास	१०८
१९.	मौत के मुंह में	(साहसिक कहानी)	श्रीराम	११०
२०.	नागरिक के कर्त्तव्य और अधिकार	(नागरिक-शास्त्र)	सम्पादक	१२१
२१.	महात्मा टालस्टाय	(जीवनचरित्र)	संकलित	१२६

२२.	मीरा बाई के पद	(कविता)	मीरा	१
२३.	गाँव वालों से दो-दो बातें	(ग्रामोपयोगी)	सम्पादक	१
२४.	रसखान	(कविता)	रसखान	१
२५.	प्रकृति दर्शन	(यात्रा)	स्वा० रामतीर्थ	१
२६.	विजय किसकी ?	(पौराणिक उपाख्यान)	नाना भाई भट्ट	१
२७.	वैताल	(कविता)	वैताल	
२८.	सम्पत्ति	(लघुनाटिका)	टालस्टाय	
२९.	यूनान के लोग	(देशविदेश परिचय)	विट्ठलराव दत्तात्रय घाटे	
३०.	प्रातः काल	(कविता)	डा० बलदेव प्रसाद मिश्र	
३१.	ज्वालामुखी के गर्भ में	(साहसिक अन्वेषण)	श्यामनारायण कपूर	१७६
३२.	धर्मशाला, सराय और होटल	(निबन्ध)	डा० धीरेन्द्र वर्मा	१८५
३३.	महाराणा प्रताप	(गौरव-गाथा)	डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा	१९१
३४.	घट	(कविता)	सियारमशरण गुप्त	१९५
३५.	राजपूत की हार	(नाटक)	सुदर्शन	१९
३६.	दोहा मानसरोवर	(कविता)	तुलसी, कबीर, रहीम	२१७
३७.	हीरा और कोयला	(भावपूर्ण सम्वाद)	रायकृष्णदास	२२
३८.	हमारा पड़ोसी चीन	(भौगोलिक)	संकलित	२२५
३९.	हमको ऐसे युवक चाहिएं	(कविता)	सोहनलाल द्विवेदी	२३१
४०.	शिष्टाचार	(शिष्टाचार)	सम्पादक	२३३
४१.	बापू के प्रति	(कविता)	रामेश्वरदयाल दुबे	२३८
४२.	आधुनिक विज्ञान के आश्चर्य	(विज्ञान)	सम्पादक	२४१
४३.	शुभ कामना	(कविता)	मैथली शरण गुप्त	२४५
४४.	लेखक परिचय		सम्पादक	२४७

: पाठ १ :

देश-गीत

जय जन-जन सुख-शान्ति वितरिणी, जय जय भारत माता।
सिन्धु, पंचनद, हिन्द, मगध माँ, कोशल उत्कल, बंग,
राजस्थान, मराठा, गुर्जर, आंध्र, द्रविड़, प्रिय अंग,
मुकुट तुम्हारा शैल हिमालय, रत्नाकर सिंहासन मणिमय,
गंगा हार सुहाता !
जय जन-जन मन मानस-हरिणी, जय जय भारत माता !
जय माँ, जय माँ, जय माँ, जय जय जय, जय माँ !
हिन्दू, मुसलिम, सिख, पारसी, बौद्ध, जैन, ईसाई,
कोटि कोटि ये प्राण तुम्हारी रज से उपजे भाई,
अपनी वाणी में गुण गाकर करते चरणों में न्योछावर,
आपस का यह नाता !
जय जन-जन समता-संचरणी, जय जय भारत माता !
जय माँ, जय माँ, जय माँ, जय जय जय, जय माँ !

सुजला, सुफलदा, शस्यश्यामला, इन्द्रधनुष बहुरंगी,
चारु चन्द्रिका, कल गायनमयि, अमल, विमल छवि अंगी,
सूर्ज-चन्द्र उतार आरती, पंछीगन गा गान भारती,
चँवर समीर डुलाता !
जय जन-जन जीवन-रस-भरिणी, जय जय भारत माता !
जय माँ, जय माँ, जय माँ, जय जय जय, जय माँ !
सत्य सुधासरि, प्रेम पयोधरि, तरणी, भरणी, धरणी,
कर्त्ता, भर्त्ता, संहर्त्ता की एकाकृति तुम जननी,
जन जन गाकर गुणगण क्षण-क्षण अर्पण कर तन,मन,जीवन,धन,
सादर शीश झुकाता !
जय जन-जन तन-मन-धन जननी, जय जय भारत माता !
जय माँ, जय माँ, जय माँ, जय जय जय, जय माँ !

प्रश्न

१. पंचनद, गुर्जर, राजस्थान, बंग—इन प्रान्तों के वर्तमान नाम बताओ।
२. भारत में मुख्यतया किस-किस मत के अनुयायी रहते हैं ?
३. भारत-भूमि की विशेषता क्या है ?

अभ्यास

४. 'शीश' शब्द के दो पर्यायवाची लिखो।
५. पहली चार पंक्तियों की व्याख्या करो।
६. पर्यायवाची शब्द बताओ—
शैल, रत्नाकर, रज, समीर, धरणी।

व्याकरण

७. समास-भेद बताओ—
समता-संचरणी, सूर्ज-चन्द्र, एकाकृति।
८. इस कविता में कौन-सा शब्दालंकार मुख्यतया प्रयुक्त हुआ है ?
९. अनुप्रास अलंकार का लक्षण बताओ।

सिपाही हाथ नहीं देता है, अधिकांश स्थलों पर गाड़ियों आदि के आवागमन का नियन्त्रण बिजली की हरी, पीली और लाल रोशनी द्वारा स्वतः होता रहता है। प्रत्येक सड़क की ओर मुँह किये हुए उक्त तीनों प्रकार की बत्तियाँ लगी रहती हैं। प्रत्येक दो मिनट के बाद अपने आप उनके रंगों में परिवर्तन होता रहता है। पीली रोशनी का अर्थ है तैयार हो जाओ, हरी का चले आओ, और लाल का रुक जाओ। इसी प्रकार यदि हरी रोशनी के साथ पीली रोशनी हो, तो इसका अर्थ यह होता है कि अपनी गाड़ी धीमी करने की चेष्टा करो, लाल रोशनी होने ही वाली है, अस्तु।

हाँ, तो उस लाल रोशनी को देखकर वह अंग्रेज ड्राइवर रुक गया। हिन्दुस्तानी साहब ड्राइवर की इस बेवकूफी को न समझ सके और बोले, "क्यों फिजूल वक्त खराब करते हो? यहाँ कोई चालान करने वाला थोड़े ही खड़ा है, जो गाड़ी रोक ली? चलो, पार कर चलो। उनकी बात सुनकर ड्राइवर ने मन में जो कुछ भी सोचा हो, किन्तु वह अत्यन्त विनीत-भाव से बोला, "श्रीमान यहाँ का यही नियम है और हमें इसका पालन करना है। लाल बत्ती के होते हुए मैं आगे नहीं बढ़ सकता।"

उक्त घटना इस बात का प्रमाण है कि इंगलैंड का छोटे से छोटा आदमी हमारे देश के बड़े से बड़े आदमी की अपेक्षा नीति-नियमों के पालन में अधिक सतर्क है। उपर्युक्त किनारी बाजार वाली घटना तो वैसे ही उदाहरण के लिए दे दी गई है। वैसे इस प्रकार की घटनाएँ आप चाहे जब देख सकते हैं। तनिक भी अधिकार या अवसर मिलते ही हम चाहे जो अवैधानिक कार्य करने को तैयार हो जाते हैं, यह कह कर कि हमें कौन रोकता है अथवा देखता है? आपको मोटरकार

वाले बड़े आदमी सिपाही की उपेक्षा करते दिखाई देंगे। मनाही होने पर बड़े आदमी सिनेमा हॉलों और मोटर बसों में सिगरेट पीते दिखाई देंगे, चाहे जहाँ थूकते दिखाई देंगे, यहाँ तक कि रेलवे प्लेटफार्म पर बिना टिकट जाते हुए और रेल में बिना टिकट सफर करते हुए दिखाई देंगे। इसका केवल एक ही कारण है, दण्ड-विधान को वे उस समय अपने से कुछ दूर समझते हैं।

तो यहाँ सभ्यता का व्यवहार हम केवल भयवश ही करते हैं और यदि हमें जेल जाने और पिटने का डर न हो, तो सम्भवतः हम किसी को जीवित भी न छोड़ें। हमारे विचार से ये सब हमारे राष्ट्र का कलंक है। हमें चाहिए कि हम शीघ्र ही स्वतन्त्र भारत के सभ्य एवं शिष्ट नागरिक बनें। जो भी हमारे वैधानिक एवं नैतिक नियम हों, उनका पालन करना अपना कर्त्तव्य ही नहीं बल्कि अपने लिए एक गौरव की वस्तु समझें।

अभ्यास

१. सामने से मोटर आने की बात सुनकर चौंकने का क्या कारण था ?
२. "नागरिकता" से तुम क्या समझते हो ?
३. इस पाठ में लन्दन के एक चौराहे की जो घटना दी हुई है, उससे क्या ज्ञात होता है ?
४. हमारे यहाँ प्रायः लोग नैतिक नियमों का पालन किस विचार से करते हैं ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे शब्दों का विग्रह करके समास का नाम बताओ :—
चहल-पहल, बाल-बाल, कारणवश, दण्ड-विधान, विनीत-भाव, नीति-नियम।
२. निम्नलिखित शब्दों का अर्थ बताओ तथा उनके प्रत्यय का उल्लेख करो :—
जीवित, नागरिक, वैधानिक, नैतिक।

कर्मठता की पूरी झलक राजेन्द्र बाबू के व्यक्तित्व में मिलती है।

किसानों की तरह ही उनकी वैयक्तिक आवश्यकताएँ बहुत कम तथा उनका स्वभाव अकृत्रिम एवं उन्मुक्त है। जिसे हम शहरीपन कहते हैं, उसकी तो राजेन्द्र बाबू पर छाया भी नहीं पड़ी। मिलने वालों से वे दो इंच अलग नहीं रह सकते और न किसी दुराव से उन्हें ढकेल ही सकते हैं। उनसे बातें करते हुए आप पर यह प्रभाव पड़ ही नहीं सकता कि आप अनिमन्त्रित या अनचाहे व्यक्ति हैं। प्रथम दर्शन के साथ ही वे आपका विश्वास-भाजन बन जाते हैं।

राजेन्द्र बाबू अपने समय के उत्तरी भारत के सर्वश्रेष्ठ छात्र थे तथा अपने सुदीर्घ सार्वजनिक जीवन में उन्होंने चिन्तन-शक्ति और बहुज्ञता का जो परिचय दिया है वह ही उन्हें अपने समय के श्रेष्ठ विद्वानों एवं चिन्तकों के बीच बिठा देता है। कानून के वे सर्वप्रशंसित पंडित हैं। साहित्य के अनेक अंगों पर उन्होंने वर्षों पहले मुजफ्फरनगर में जो भाषण दिया, वह संस्कृत प्रेमियों को आज भी पथ-प्रदर्शक बना हुआ है। कांग्रेस के अध्यक्ष अथवा सम्मेलनों के सभापति के पदों से उन्होंने जो भी भाषण दिये, उनका वजन अपनी जगह पर अलग है। यहाँ तक कि किसान, जमींदार अथवा बंगाली-बिहारी झगड़ों में भी पंच की हैसियत से उन्होंने जो फैसले दिये, वे कीमती डाकूमेंट हो गये हैं।

जेल में बैठे-बैठे सहायक ग्रन्थों के बिना ही उन्होंने खंडित भारत नाम से जो पुस्तक लिखी, उसमें विभाजन के विषय में विचार करने वाले सभी लोगों के लिए उन्होंने सभी दलीलें और सारे सुझाव एकत्र कर दिये।

अपने देश में बोली जाने वाली शायद दो-एक ही ऐसी प्रमुख भाषाएँ होंगी, जिनमें बाबू भाषण या वार्तालाप न कर सकते हों।

स्मरण-शक्ति का यह हाल है कि जेल में आत्मकथा लिखने बैठे, तो डायरी, नोट अथवा कतरनों और चिट्ठियों के फाइलों के बिना ही फुलस्केप के बारह-चौदह सौ पन्ने रंग डाले और कोई चालीस वर्षों का हाल इस विवरण से लिख दिया कि मानो दिन में देखी गई बातों का ब्यौरा शाम को दर्ज कर रहे हैं।

कहते हैं कि जब वे खाद्य-मन्त्री थे, तब फाइलें तो वे पौ फटने के पहले ही देख जाते थे और सेक्रेटरी जब नोट लेने आता तब वे चरखा भी चलाते जाते और साथ-साथ नोट भी लिखाते जाते। सेक्रेटरी से फाइल का विषय बताया नहीं कि राजेन्द्र बाबू के दिमाग में इसमें लिखी सारी बातें चमक उठीं और उन्होंने अपना स्पष्ट निर्णय लिख दिया।

विद्या का यह चमत्कार, चिन्तन की यह तीव्रता और स्मृति का यह आठों पहर जगा रहना क्या है और राजेन्द्र बाबू ने इन्हें कैसे प्राप्त किया होगा? कहते हैं भूलाभाई देसाई पंक्तियाँ नहीं, पृष्ठ पढ़ते थे और स्वामी विवेकानन्द उतनी ही देर में पुस्तक पढ़ जाते थे, जितनी देर में उसके पन्ने उलटते थे। स्मृति के सम्बन्ध में कुछ ऐसी ही विलक्षण शक्ति राजेन्द्र बाबू को भी प्राप्त है।

विद्या के माध्यम से उन्होंने नवयुग के सार को तो अपना लिया है, किन्तु उसके बाहरी रूप-रंग और सज-धज को निस्सार समझकर छोड़ दिया है। यही कारण है कि नागरिक जीवन के चारु चित्र की एक भी झाँकी इनके व्यक्तित्व

मे हमें नहीं मिल सकती। अपने जीवन को इस देश की गरीब जनता के जीवन से एकाकार करने में इन्हें जैसी सफलता मिली है, वैसी गांधीजी के बाद किसी और को नहीं मिली। सभी अवस्थाओं से गुजरते हुए उन्होंने इस बात को बराबर याद रखा है कि वे और कुछ होने के पहले, भारत के किसानों के सेवक हैं। हमारे नेताओं में खान-पान, शील-स्वभाव, पहनावे-ओढ़ावे और सहानुभूति की मूल शिक्षाओं को लेकर बाहर से भीतर तक जैसे किसान राजेन्द्र बाबू हैं, वैसा कोई और नहीं है।

बढ़ते-बढ़ते राजेन्द्र बाबू चाहे जहाँ भी चले जायँ, किन्तु जड़ उनकी जीरादेई गाँव में रहेगी और उनके हृदय के देवता भी गाँवों में ही निवास करेंगे।

गांधीजी के समान ही राजेन्द्र बाबू की दृष्टि भी मनुष्य की सारी समस्याओं के विषय में एक समान प्रमुख है। वे एक काम को बहुत बड़ा और दूसरे को बहुत छोटा नहीं मानते। यह उनके चरित्र की एक अद्भुत विशेषता है और इससे यह भी मालूम होता है कि वे जीवन के सोपान पर कितना ऊपर जा चुके हैं। अपने गाँव में सभी प्रकार के लोगों से राजेन्द्र बाबू कुछ ऐसे घुले-मिले हैं कि गाँव वालों को उनके व्यक्तित्व की विशालता का भान ही नहीं हो पाता। जब वे अपने गाँव जाते हैं तब अक्सर ही कोई न कोई बुढ़िया नई-पुरानी चिट्ठियाँ लिए हुए उनके पास दौड़ती है और कहती है कि इन्हें आप ही पढ़ दीजिए, क्योंकि दूसरे लोग मेरी चिट्ठियाँ मुझे ठीक से नहीं सुनाते हैं। और इस महापुरुष की चकरा देने वाली महत्ता को देखिए कि वह बड़े ही प्रेम से बुढ़िया

की चिट्ठी पढ़ देता है, मानो यह भी विधान-परिषद् का ही कोई काम हो।

अभ्यास

१. राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद के रहन-सहन और वेश-भूषा के बारे में तुम क्या जानते हो ?

२. गांधीजी भारतीय प्रजातन्त्र का अध्यक्ष किसी किसान को क्यों बनाना चाहते थे ?

व्याकरण

१. निम्नलिखित पदों का विग्रह करके समासों के नाम लिखो :—

भविष्यवाणी, विश्वास-भाजन, चिन्तन-शक्ति, संस्कृत-प्रेमी, बंगाली-बिहारी, स्मरण-शक्ति, बारह-चौदह, आत्मकथा, नव-युग, खान-पान, विधान-परिषद्, शील-स्वभाव।

२. नीचे लिखे शब्दों में 'अ' या 'अन' जुड़ने से शब्दों का अर्थ उल्टा हो गया है। अध्यापक जी से इसका कारण समझकर ऐसे पाँच उदाहरण और लिखो :—

अकृत्रिम, अनियन्त्रित, अनचाहा, असाधारण, अस्वाभाविक।

रचना

१. नीचे लिखे शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो :—

कल्पना, अध्यक्ष, संयोग, भविष्यवाणी, प्रजातन्त्र, आसीन।

२. निम्नलिखित शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखो :—

कृषक, समान, आवश्यकताएँ, भाजन, सुझाव।

विशेष

स्कूल के पुस्तकालय से डा० राजेन्द्रप्रसाद की जीवनी लेकर पढ़ो।

: ८ :

हमारा झण्डा

एक हमारा ऊँचा झण्डा, एक हमारा देश ।
इस झण्डे के नीचे निश्चित एक अमिट उद्देश ।
हमारा एक अमिट उद्देश ।

(१)

देखा जागृति के प्रभात में एक स्वतन्त्र प्रकाश,
फैला है सब ओर एक-सा एक अतुल उल्लास ।
कोटि-कोटि कंठों में कूजित एक विजय-विश्वास,
मुक्त पवन में उड़ उठने का एक अमर अभिलाष ।
सब का सुहित, सुमंगल सब का, नहीं वैर-विद्वेष,
एक हमारा ऊँचा झण्डा, एक हमारा देश ।

(२)

कितने वीरों ने कर-कर के प्राणों का बलिदान,
मरते-मरते भी गाया है इस झण्डे का गान ।
रखेंगे ऊँचे उठ हम भी अक्षय इसकी आन,
चखेंगे इसकी छाया में रस-विष एक समान ।
एक हमारी सुख-सुविधा है, एक हमारा क्लेश,
एक हमारा ऊँचा झण्डा, एक हमारा देश ।

(३)

मातृभूमि की मानवता का जाग्रत जय-जयकार,
फहर उठे ऊँचे से ऊँचा यह अविरोध, उदार ।
साहस, अभय और पौरुष का यह सजीव संचार,
लहर उठे जन-जन के मन में सत्य-अहिंसा-प्यार ।

अगनित धाराओं का संगम मिलन-तीर्थ-सन्देश,
एक हमारा ऊँचा झण्डा, एक हमारा देश।
सुनें सब—एक हमारा देश।

अभ्यास

१. जागृति के प्रभात से क्या अभिप्राय है ?
२. हमारे झण्डे के रंग और बीच में अशोक चक्र किस-किस भावना के प्रतीक हैं ?
३. वीरों ने इस झण्डे के लिए प्राण कब दिये ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे शब्दों में से संज्ञाएँ चुनकर उनके भेद लिखो :—
सुख, एक, गान, देश, बलिदान, सत्य, झण्डा, साहस, हमारा, प्रभात, कंठ, विजय, ऊँचा, उल्लास, उदार।
२. 'उद्देश' शब्द अशुद्ध है। शुद्ध शब्द है—'उद्देश्य'। अध्यापक जी से पूछो कि कविता में ऐसा प्रयोग किस कारण हुआ है ?
३. ध्यान से पढ़कर बताओ कि नीचे लिखे शब्दों में 'अ' लगाने से अर्थ में क्या प्रभाव पड़ा है :—
अमिट, अतुल, अक्षय, अविरोध, अभय, अगनित।

रचना

'हमारा राष्ट्र-ध्वज' विषय पर निबन्ध लिखो।

: १३ :

ओलम्पिक खेल

ओलम्पिक खेलों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। इनका आरम्भ ईसा से लगभग ७७६ वर्ष पूर्व माना जाता है। सबसे पहले इन खेलों का श्रीगणेश यूनान में हुआ था। यूनान में ओलम्पिया नाम की एक गुफा है। यूनान वालों का यह विश्वास था कि इस गुफा में उनके देवता रहते हैं। पहले-पहल खेल इसी से आरम्भ हुआ, इसलिए इसका नाम ओलम्पिक खेल रखा गया।

आधुनिक काल में ओलम्पिक खेलों का आरम्भ सन् १८९६ से हुआ। तब से प्रत्येक चौथे वर्ष संसार के भिन्न-भिन्न देशों में इनका आयोजन होता है। युद्ध के कारण ये खेल बन्द भी हो जाते हैं। इन खेलों में संसार के सभी उन्नत तथा सभ्य देश भाग ले सकते हैं। भारत ने सबसे पहले सन् १९२० में इन खेलों में भाग लिया था। उस वर्ष बेल्जियम के प्रसिद्ध नगर ऐंटवर्प में खेल हुए थे। सन् १९२८ में भारत की हॉकी टीम ने अपने खेल से सारे संसार को चकित कर दिया। सन् १९३२ और १९३६ के ओलम्पिक खेलों में भी भारतीय हॉकी टीम विश्वविजयी हुई। सन् १९३६ के खेल में हॉकी टीम के कप्तान श्री ध्यानचन्द ने बहुत नाम कमाया। सन् १९४८ में लन्दन में ओलम्पिक खेल हुए थे और उनमें भारत ने एक स्वतन्त्र राष्ट्र की हैसियत से भाग लिया था।

लंदन में ओलम्पिक खेलों का समारोह ३० जुलाई सन् १९४८ से आरम्भ हुआ और १४ अगस्त को समाप्त हुआ।

प्राचीन प्रथा के अनुसार लगातार पन्द्रह दिनों तक इनका समारोह रहता है। लंदन में इन खेलों के लिए दो वर्ष से तैयारियाँ हो रही थीं। खिलाड़ियों के रहने तथा उनके खाने-पीने का प्रबन्ध बहुत पहले से आरम्भ हो गया था। खाने-पीने की जो सामग्री थी उसकी रक्षा के लिए लगभग बीस विद्यार्थी नियुक्त किये गये थे। उनका प्रबन्ध अत्यन्त सराहनीय था।

कुल ५६ देश खेलों में सम्मिलित हुए और लगभग पाँच हजार खिलाड़ी, खेलों में भाग लेने के लिए, लंदन में एकत्र हुए थे। खेल देखने के लिए संसार के भिन्न-भिन्न देशों से बहुत से लोग आये थे। कहा जाता है कि इतने देशों के और इतने अधिक खिलाड़ी तब तक किसी अन्य ओलम्पिक में सम्मिलित नहीं हुए थे। अमेरिका ने सबसे अधिक खिलाड़ियों को भेजा था। उसके खिलाड़ी चार सौ से ऊपर थे। भारत ने लगभग सौ चुने हुए खिलाड़ी भेजे थे। इन समस्त खिलाड़ियों का खेल देखने के लिए दर्शकों ने लगभग ६६,५५,००० रुपये के टिकट मोल लिये थे। इससे पता चलता है कि भीड़ कितनी अधिक थी।

लंदन में ओलम्पिक खेलों का उद्घाटन इंगलैंड-नरेश ने किया था। जिस दिन यह खेल प्रारम्भ हुआ उस दिन दो बजे से ढाई बजे तक सेना के सिपाही बैंड द्वारा भीड़ का मनोरंजन करते रहे। भीड़ में लगभग ८५,००० दर्शक थे। पौने तीन बजे सम्राट् पधारे। उनके पधारने पर तुमुल करतल ध्वनि हुई। ठीक तीन बजे प्रत्येक देश के खिलाड़ी सम्राट् के सामने से निकले। यूनान के खिलाड़ी सबसे आगे थे और इंगलैंड के सबसे पीछे। प्रत्येक खिलाड़ी-दल के पास अपने

राष्ट्र का झंडा था। इसी झंडे को झुका कर वह सम्राट् का अभिनन्दन करता था। भारतीय खिलाड़ी नीले कोट पहने और पंजाबी कलगीदार साफे बाँधे हुए थे।

प्राचीन प्रथा के अनुसार ठीक चार बजे ओलम्पिक मशाल लेकर एक दौड़ने वाला आया। यह मशाल यूनान में जलाई गई थी। यूनान से इस मशाल को एक-एक करके सिपाही अपनी राष्ट्रीय वर्दी में १२,००० मील तक स्थल पर लाये थे। इसके पश्चात् ब्रिटेन का एक सैनिक उसे ले गया। बेंबली में खेल का मैदान था। मशाल लाने वाले ने पहले खेल के मैदान का चक्कर लगाया। फिर ओलम्पिक की आग एक बड़े से पात्र में जला दी गयी। यह आग पन्द्रह दिन तक बराबर जलती रही।

आग जलते ही शाही बिगुल बजाने वालों ने बिगुल बजा कर ओलम्पिक के आरम्भ की घोषणा की और जैसे ही बिगुल बन्द हुआ, सात हजार कबूतर छोड़े गये। थोड़ी देर के लिए तो आसमान में कबूतर ही कबूतर दिखाई देने लगे। उन्होंने दो बार खेल के मैदान की परिक्रमा की और फिर क्षितिज पर विलीन हो गये। प्राचीन समय में यूनान में ओलम्पिक खेल आरम्भ होने की सूचना कबूतर छोड़ कर ही दी जाती थी और शान्ति स्थापित रखने की प्रार्थना की जाती थी। इसके बाद ओलम्पिक की ध्वजा फहराई गई और उसे २१ तोपों की शाही सलामी दी गई। फिर सभी देशों के झंडा-बरदार सम्राट् के सामने अर्धचन्द्राकार खड़े हुए। उन्होंने अपने-अपने झंडे झुका कर ओलम्पिक की शपथ ली। इस प्रकार ओलम्पिक का पहला दिन समाप्त हुआ।

ओलम्पिक खेलों में कई प्रकार के सभ्य तथा आधुनिक

खेल भी खेले जाते हैं। हॉकी, फुटबॉल वास्केटबॉल, जलपोलो, तैराकी, साइकिलिंग, बॉक्सिंग, कुश्ती आदि सभी खेल होते हैं। भारत ने हॉकी, फुटबॉल, कुश्ती, साइकिलिंग, जलपोलो, तैराकी तथा अन्य व्यायाम के खेलों में भाग लिया था। पर केवल हॉकी में भारत सर्व-विजयी हुआ।

हॉकी टीम के कप्तान बम्बई-निवासी श्री कृष्णालाल थे। १३ अगस्त को हॉकी की ओलम्पिक हुई। मैदान में तीन टीमें आकर खड़ी हुई। सर्व-विजयी होने के कारण कप्तान कृष्णालाल सबसे ऊँचे पर थे। उनके दायें-बायें इंगलैंड तथा हालैंड के कप्तान थे। तीनों टीमों को पदक बाँटे गये। इसके बाद हमारा राष्ट्रीय गान बैंड पर बजाया गया। उस समय सभी दर्शक खड़े हो गये। मैदान में सबसे ऊँचा और सबसे प्यारा हमारा तिरंगा झंडा था। उस समय इस झंडे को देखकर प्रत्येक भारतीय के मन में जो प्रसन्नता हुई होगी उसका अनुमान लगाना कठिन है।

इसके बाद सन् १९५२ के ओलम्पिक खेल फिनलैंड देश की राजधानी हेलसिंकी में हुए। हमारी हॉकी टीम फिर अपनी कला से सारे संसार को चकित कर विश्वविजयी सिद्ध हुई। इस बार उसके नेता उत्तर प्रदेश के श्री दिग्विजयसिंह 'बाबू' थे। अन्य किसी खेल में इस बार भी भारत प्रथम स्थान नहीं पा सका।

१९५६ में फिर भारतीय हॉकी टीम विश्वविजयी रही।

१९६० में ओलम्पिक खेल यूनान की राजधानी रोम में हुए। इस बार की दो बातें उल्लेखनीय हैं। पहली तो यह कि बीसियों वर्षों से निरन्तर विजय प्राप्त करने वाली हमारी

हॉकी टीम पराजित हो गई। जीत का सेहरा हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान के सिर बँधा। दूसरी उल्लेखनीय बात है—प्रसिद्ध धावक मिलखासिंह का दौड़ में फाइनल में पहुँचना। दौड़ में उन्हें चौथा स्थान प्राप्त हुआ है। अन्य किसी खेल में इस बार भी भारत प्रथम स्थान प्राप्त नहीं कर सका।

खेलों के क्षेत्र में भारत ने पर्याप्त उन्नति की है, और निरन्तर उन्नति कर रहा है।

अभ्यास

१. ओलम्पिक खेलों का नामकरण किस प्रकार हुआ ?
२. भारत ने सबसे पहले ओलम्पिक खेलों में कब भाग लिया ?
३. ओलम्पिक खेल किस प्रकार आरम्भ होते हैं ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे वाक्यों में पुरुषांकित शब्दों का पद-परिचय दो :—
   (क) ओलम्पिक खेलों में भारत ने सबसे पहले* १९२० में भाग लिया था*।
   (ख) खेल देखने सैंकड़ों* के कई देशों से लोग* आये थे।
   (ग) तीनों* टीमों में पदक बाँटे गये।
२. प्रत्येक, विलीन, प्रार्थना, अनुमान, सुमधुर—इन शब्दों में आये उपसर्गों के नाम लिखो।

रचना

१. अर्थ लिखो :—
   श्रीगणेश, आयोजन, समारोह, सराहनीय, उद्घाटन, अभिनन्दन।

: १४ :

कदम आगे बढ़ाता चल

(१)

न डर भीषण दहाड़ों से,
न डर झंझाड़ झाड़ों से।
न डर दुर्गम पहाड़ों से,
अथक से,
शक्ति से,
श्रम से,
शिलाओं को हटाता चल।
सुगम पथ को बनाता चल।

(२)

न डर तूफान आने दे,
न डर पग लड़खड़ाने दे।
न डर घनघोर छाने दे,
चमक से,
तेज से,
लौ से,
तिमिर को जगमगाता चल,
सुगम पथ को बनाता चल।

(३)

न डर कस ले कमर अपनी,
न डर गति तेज कर अपनी।
नजर रख लक्ष्य पर अपनी,

गरज से,
शोर से,
रव से,
गगन मण्डल हिलाता चल,
सुगम पथ को बनाता चल ।

(४)

न डर, उल्लास लेकर बढ़,
न डर, मृदु हास लेकर बढ़ ।
न डर, विश्वास लेकर बढ़,
हृदय से,
कंठ से,
स्वर से,
विजय के गीत गाता चल,
सुगम पथ को बनाता चल ।

अभ्यास

१. सुगम पथ बनाने के लिए क्या करना चाहिए ?
२. अपनी नजर कहाँ रखनी चाहिए ?
३. इस कविता से क्या भाव उत्पन्न होता है ?

व्याकरण

१. निम्नलिखित के विपरीतार्थक शब्द लिखो :—
दुर्गम, तिमिर, रव, उल्लास, मृदु, हास ।
२. नीचे लिखे शब्दों में संज्ञाएँ छाँटकर उनके भेद लिखो :—
भीषण, भाड़, पहाड़, शक्ति, दुर्गम, पथ, श्रम, मृदु, उल्लास, गीत, विजय, पथ, सुगम, गगन ।

रचना

१. इनका वाक्यों में प्रयोग करो: —
दुर्गम, श्रम, लौ, तिमिर, गति, लक्ष्य, उल्लास, मृदु ।

२. नीचे लिखे शब्दों का एक-एक पर्यायवाची लिखो :—
पहाड़, रव, सुगम, विजय, हास, अथक ।

: १५ :

सैनिक शिक्षा का महत्त्व

संसार के अब तक के इतिहास में देशों के बनाने और बिगाड़ने में सेना का बहुत बड़ा हाथ रहा है। ऐसा भी कोई उदाहरण नहीं मिलता जिसमें सैन्य-बल के आधार के बिना किसी भी देश में क्रान्ति सफल हुई हो। जब भी किसी देश पर आपत्ति के बादल घिर कर आये हैं, सेनाओं ने ही आगे बढ़कर उनका सामना किया है और देश की रक्षा की है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक राज्य अथवा देश को सेनाओं की आवश्यकता रही है और रहेगी। यहाँ तक कि अशोक जैसे शान्ति-प्रिय सम्राट् के पास भी एक विशाल सेना थी। यह ठीक है कि अशोक ने अहिंसा-व्रत धारण करने के पश्चात् सेना का प्रयोग किसी दूसरे राज्य पर अधिकार करने के लिये नहीं किया, पर उसकी विशाल सेना ने देश में शान्ति रखने और अहिंसा-धर्म के प्रचार में सहयोग दिया। अतएव सेनाओं की आवश्यकता केवल युद्ध के समय ही नहीं, वरन् शान्ति के समय भी होती है।

वर्तमान काल में, जब कि संसार का मानचित्र बड़ी तेजी से बदल रहा है, सेनाओं का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कुछ समय पूर्व संसार के मानचित्र पर जर्मनी एक विशाल साम्राज्य के रूप में था, वह अब खण्ड-खण्ड दिखलाई पड़ता है। मानचित्र पर जहाँ पहले राष्ट्रवादी चीन था, वहाँ अब लाल चीन हो गया है। अपने ही देश को लीजिए। ब्रिटिश साम्राज्य से निकल कर वह आज स्वतन्त्र जनतन्त्र है।

भारत की वर्तमान परिस्थिति ने उसकी रक्षा के प्रश्न को और भी महत्त्वपूर्ण बना दिया है। विभाजित होने के पूर्व भारत एक सुदृढ़ किले के समान था, उस समय सीमान्त प्रदेशों में इतने सैनिक रखने की आवश्यकता न थी। पर आज पश्चिम में अरब सागर से लेकर कश्मीर तक और पूर्व में बंगाल की खाड़ी से लेकर हिमालय तक के सीमान्त प्रदेशों को सुरक्षित रखना अनिवार्य हो गया है। इसके लिए पर्याप्त सैनिक-शक्ति की आवश्यकता है। इसका संगठन आत्म-निर्भर होकर करना है।

अंग्रेजों ने भारतीय सेना का संगठन अपने स्वार्थ की दृष्टि से किया था। उनका मुख्य ध्येय अपने साम्राज्य को सुदृढ़ करना था। ब्रिटिश शासन काल में राजपूत, जाट, सिक्ख, गोरखा आदि जातियों को ही सेना की भर्ती में प्रधानता दी जाती थी। विस्तृत रूप के सैनिक शिक्षा देने की कोई योजना ही न थी। पर अब देश के प्रत्येक व्यक्ति को आत्म-रक्षा तथा आत्म-निर्भरता की भावना जाग्रत करने के लिए सैन्य विद्या का ज्ञान देना अत्यन्त आवश्यक हो गया है। यही कारण है कि स्कूलों तथा कालिजों में इस विषय को अनिवार्य बनाने का प्रयास किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में कुछ कार्य भी आरम्भ हो गया है। समस्त भारत में नेशनल कैडिट कोर तथा प्रान्तों में प्रोविंशियल एज्युकेशन कोर की स्थापना कर उसी उद्देश्य की पूर्ति करने का प्रयत्न किया गया है। इससे एक सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि देश को शिक्षित सैनिक मिल सकेंगे।

सैनिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने से भारतीय समाज को भी कितने ही लाभ हैं। आज नागरिकों के जीवन में जितनी उच्छृङ्खलता तथा अनियमितता तथा शिथिलता दिखलाई

पड़ती है, उसे सैनिक शिक्षा के द्वारा ही दूर किया जा सकेगा। हम देखते हैं कि एक सैनिक का जीवन त्याग और तपस्या का जीवन होता है। उसे प्रारम्भ से ही कठिन से कठिन वातावरण में रखा जाता है, जिससे कि वह कठिनाइयों से लड़ने का अभ्यासी हो जाय। कार्य में तत्परता ही उसके जीवन का ध्येय होता है। चाहे जाड़े से शरीर काँप रहा हो, गर्मी से झुलसा जा रहा हो, तथा घनघोर वर्षा ही क्यों न हो रही हो, पर वह अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहता है, तथा उच्च पदाधिकारियों की आज्ञाओं के पालन करने को ही वह अपना परम धर्म समझता है। अनुशासन मानना उसका स्वभाव बन जाता है।

सैनिक के जीवन में सहयोग तथा आत्मनिर्भरता की भावना भी कूट-कूट कर भरी होती है। युद्ध-क्षेत्र में एक दूसरे के सहयोग के बिना कार्य चल ही नहीं सकता। एक सैनिक अच्छी तरह से जानता है कि दूसरे से सहयोग किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है, तथा दूसरे को सहयोग देने का कौन-सा अवसर है। युद्ध-क्षेत्र में कभी-कभी ऐसे भी अवसर प्राप्त होते हैं, जब वह अपने साथियों से बिलकुल ही अलग हो जाता है, उस समय उसे अपनी शक्ति पर ही आश्रित रहना पड़ता है। तब आरम्भ से ही दी गई आत्मनिर्भरता की शिक्षा ही उसके लिए सहायक होती है। ऐसी ही अवस्थाओं में सैनिक की प्रत्युत्पन्न-मति की भी परीक्षा होती है।

सैनिक का सर्वोपरि गुण आत्मानुशासन है, जिससे वह शान्त-चित्त रहता है। इसी से भय तथा लालच जैसी कुप्रवृत्तियाँ उस पर प्रभाव नहीं डाल सकती। यही नहीं, सैनिक सच्चा देश-प्रेमी भी होता है। वह कभी भी अपने देश के गौरव

को नष्ट होते नहीं देख सकता। सदैव देश के प्रति प्राण न्यौछावर करने के लिए प्रस्तुत रहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सैनिक का जीवन सहिष्णुता, आत्मनिर्भरता, अनुशासन, आत्मविश्वास, नियमितता, प्रत्युत्पन्न-मति, आत्मानुशासन, कर्त्तव्यपरायणता तथा देश-प्रेम आदि की भावनाओं से ओतप्रोत होता है। अतएव सैनिक एक सच्चा नागरिक है। वह केवल देश की रक्षा ही नहीं करता वरन् जीवन के सच्चे आदर्शों को व्यावहारिक रूप देकर उन पर चलने को हमें प्रेरित करता है। यदि हम अपने जीवन में थोड़े से भी अंश में उन आदर्शों का पालन करें तो अपने नागरिक जीवन को आदर्श बना सकेंगे। इसी में हमारे जीवन की सफलता है तथा देश का कल्याण है।

कुछ लोगों का विचार है कि सैनिक के सदैव हिंसात्मक वातावरण में रहने के कारण उसका हृदय कठोर हो जाता है, तथा करुणा, दया, सहानुभूति आदि जैसे मनुष्योचित गुण उसमें लेशमात्र भी नहीं होते। इसी से वह कभी-कभी नृशंस कार्यों में संलग्न हो जाता है। पर वह विचार नितान्त भ्रममूलक है। सैनिक भी मानव हैं। समय-समय पर वे अपने साथियों की ही नहीं वरन् शत्रुओं तक की रक्षा कर अपनी उन कोमल प्रवृत्तियों का परिचय देते हैं। बाढ़ आने पर, आग लगने पर अथवा अन्य कोई महान् घटना होने पर, जब कि साधारण जन की अवस्था किंकर्त्तव्यविमूढ़ जैसी हो जाती है, ये ही लोग आगे बढ़ कर सहायता करते हैं। उस समय ये जिस अनुशासन तथा जन-सेवा की भावना का परिचय देते हैं, वह अति सराहनीय है।

कभी-कभी यह सुनने में आया है कि अमुक देश की सेना

ने बड़ा अत्याचार किया, बर्बरता का नंगा नाच नाचा। पर इस सब को उस देश के नैतिक पतन का ही द्योतक समझना चाहिए। नैतिकता का अभाव तथा वहाँ के नेतृत्व में कमी ही इसका कारण होते हैं। सब देशों की सेनाओं में यदि इस प्रकार की कुत्सित भावनाएँ होतीं तो कभी विश्व-शान्ति के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सेना संगठित करने की कल्पना भी नहीं की जाती।

अभ्यास

१. सैनिक शिक्षा तथा सेना की आवश्यकता पर प्रकाश डालो।
२. सैनिक में कौन-कौन से विशेष गुण होने चाहिए?
३. 'संसार का मानचित्र बड़ी तेजी से बदल रहा है'—इसका क्या अभिप्राय है?
४. प्रत्येक युवक को सैनिक-शिक्षा क्यों प्राप्त करनी चाहिए?

व्याकरण

१. नीचे दिये शब्दों में सन्धि-विच्छेद करो :—
प्रत्येक, पदाधिकारी, उच्छृङ्खलता, प्रारम्भ, अत्याचार, सदैव, सर्वोपरि, आत्मानुशासन।

२. नीचे कुछ शब्द दिये गये हैं। इनसे तत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी शब्द अलग-अलग छाँटो :—
हाथ, बल, बिना, विशाल, बन, एजूकेशन, जीवन, जिन्दगी, ताकत, बन, कल्पना, अमुक, नाच, फलाँ।

रचना

१. निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग अपने वाक्यों में करो :—
क्रान्ति, अनिवार्य, प्रत्युत्पन्नमति, आत्मानुशासन, शान्ति-प्रिय, विभाजित, आत्म-निर्भर।

२. 'छात्र और सैनिक शिक्षा' विषय पर एक निबन्ध लिखो।

: १६ :

लाइब्रेरी : पुस्तकें नहीं, यहाँ पशु उधार दिये जाते हैं

उभरे गाल और बिखरे बालों वाला एक बालक धुनी हुई कपास-जैसी कोई उजली, गुदगुदी चीज उठाये कमरे में आया। काउंटर के पास पहुँचकर वह बोला—"यह लीजिए सर, आपका स्किम्पी।" और एक दूध-सा सफेद खरगोश उसने काउंटर पर रख दिया। "हूँ", काउंटर के पीछे बैठा हुआ अधेड़ पुरुष गुर्राया—"पर तुमने इसे अपने पास एक दिन ज्यादा रखा है। दस सेंट जुर्माना देना होगा।" बालक ने अपनी जेब टटोली और

पाँच-पाँच सेंट के दो सिक्के काउंटर पर धर दिये। फिर हसरत भरी निगाह से खरगोश की ओर देखने लगा। "घबराओ मत स्किम्पी। जब क्रिस्मस पर दादीजी दो डालर देंगी, मैं तुम्हें जरूर खरीद ले जाऊँगा। फिर तुम हमेशा हमारे घर रहोगे।" बालक ने यह कहते हुए खरगोश की गुलाबी नाक दुलार से सहलायी।

यह दृश्य है अमेरिका के सेक्रामेंटो नगर की पशु-लाइब्रेरी का, जहाँ ऐसी घटनाएँ प्रतिदिन घटती हैं। और अमेरिका में ऐसी पशु-लाइब्रेरियाँ भी बीसों है।

पशु-लाइब्रेरी शब्द कुछ अटपटा लगेगा। क्या वहाँ पशु आकर पढ़ते हैं—कोई पूछ सकता है। वहाँ पशु तो पढ़ने नहीं आते, परन्तु पशु वहाँ रखे रहते हैं—वैसे ही, जैसे पुस्तकालयों में पुस्तकें रखी रहती हैं। और जैसे आप पुस्तकालय के सदस्य बनकर, वहाँ से मनचाही पुस्तक पढ़ने के लिए घर ले जा सकते हैं, उसी तरह पशु-लाइब्रेरी से आप अपना मनपसन्द पशु पालने के लिए घर ले जा सकते हैं। पर लाइब्रेरी के कुछ नियम हैं। सात वर्ष से बड़े बालक ही उसके सदस्य बन सकते हैं। वे किसी पशु को केवल सात दिन अपने पास रख सकते है। उसके बाद जितने भी दिन रखें, उन पर दस सेंट प्रतिदिन के हिसाब से दण्ड देना पड़ता है। आप पशु-लाइब्रेरी में हाथी-घोड़े या शेर-चीते की माँग नहीं कर सकते। वहाँ तो केवल वही छोटे पशु-पक्षी रखे जाते हैं, जिन्हें आप अपने घर पर प्यार-दुलार के लिए पाल सकते हैं।

संसार की सर्वप्रथम पशु-लाइब्रेरी जान रिप्ले फोर्ब्स ने १९५१ में सेक्रामेंटो में खोली। फोर्ब्स प्राणिशास्त्र के अध्यापक थे। स्कूल में पढ़ाते समय वे देखते थे कि प्राणि-

शास्त्र के पाठ में उदाहरण के लिए जब भी जीवित पशु-पक्षी क्लास में लाये जाते हैं, विद्यार्थी बहुत उत्साहित हो जाते हैं, उस दिन का पाठ उन्हें बड़ा दिलचस्प लगता है और आसानी से उनके दिमाग में उतर भी जाता है। इसी पर विचार करते-करते उनके मन में पशु-लाइब्रेरी की कल्पना आई। उन्होंने सोचा—"यदि कोई ऐसी संस्था हो, जो बच्चों को सात-आठ दिन अपने पास रखने के लिए पालतू पशु दिया करे, तो बच्चों को पशु-पक्षियों को समीप से देखने-समझने का अवसर मिलेगा, और पशु-पक्षियों पर प्यार जताने की उनकी जन्मजात अभिलाषा की तृप्ति होगी।"

फोर्ब्स ने दो-चार मित्रों से इसकी चर्चा की और उनकी सहायता से प्रथम पशु-लाइब्रेरी खुल गयी। बालकों और अभिभावकों ने उसका ऐसा स्वागत किया कि शीघ्र ही फोर्ब्स के आयोजन ने एक नये आन्दोलन का रूप धारण कर लिया। आज अमेरिका के बड़े शहरों में बीस से अधिक पशु-लाइब्रेरियाँ हैं। न्यूयार्क में अभी हाल में जब पशु-लाइब्रेरी खुली, तो पहले ही दिन कई हजार बालकों ने उसकी सदस्यता की अर्जी भर दी और तीन सौ पशु तो पहले ही दिन सदस्यों के नाम जारी कर दिये गये। वेस्ट पोर्ट में एक और लाइब्रेरी है, जिसके विस्तार के लिए फोर्ब्स ने १३,००,००० रुपये की योजना बनायी है।

अधिकांश पशु-लाइब्रेरियाँ मोर, कबूतर, तोते, बुलबुल, मैना, सफेद चूहे, खरगोश, गिनी पिग, समूरदार बड़ी गिलहरियाँ, साहियाँ, बिल्लियाँ, लोमड़ियाँ और निर्विष साँप रखती हैं।

बालकों को पूरी छूट रहती है कि वे आकर चाहे जितने

समय उन पशुओं को देखने रहें। वे उन्हें हाथ में लेकर सहला सकते हैं, उन्हें पुचकार सकते हैं। आध-पौन घण्टे के बाद, जब बालक तय कर लेते हैं कि उन्हें कौन-सा पशु या पक्षी घर ले जाना है, तब जाकर लाइब्रेरी के क्लर्क को उसका नम्बर बताते हैं।

इनके बाद प्रार्थी को एक आवेदन-पत्र भरना पड़ता है। उसमें यह लिखा होता है—"मैं सात बरस पार कर चुका हूँ; और जिस पशु या पक्षी को मैं ले जा रहा हूँ, उसे क्या खिलाना-पिलाना तथा कैसे रखना चाहिए, यह सब मुझे मालूम है।" और इस विषय में किसी को झूठ नहीं बोलना पड़ता। लाइब्रेरी ने हर एक पशु और पक्षी के स्वभाव और खान-पान आदि के विषय में छोटी-छोटी सुन्दर और सरल पुस्तकें छपवा रखी हैं। कोई भी बालक इन्हें पढ़कर सब आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकता है।

पशु-पक्षी महीने में केवल एक सप्ताह बाहर रह सकते हैं। हफ्ते भर किसी के घर पर रहकर आने के बाद डाक्टरी निरीक्षण के लिए उन्हें तीन दिन लाइब्रेरी के विशेष बार्ड में रखा जाता है। यह न समझिए कि बच्चे उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते। बात उल्टी है, बच्चे उन्हें इतना अधिक प्यार और भोजन देते हैं कि यदि पशु-पक्षियों को उनके पास सात दिन से अधिक रहने दें, तो उनके बीमार पड़ने की आशंका पैदा हो जाती है।

पशुओं की देख-भाल के लिए लाइब्रेरी में योग्य डाक्टर रहते हैं। पशु को बाहर भेजने के पूर्व वे उसकी पूरी-पूरी जाँच करते हैं—कहीं ऐसा न हो कि पशु को कोई छूत की बीमारी हो और उसके कारण बच्चा भी बीमार पड़ जाये।

लौटकर आने पर भी पशु की पूरी जाँच की जाती है और आवश्यक हो तो दवा दी जाती है। क्रोधी और उग्र स्वभाव वाले पशु-पक्षी बच्चों को नहीं दिये जाते। साँप को ले जाने के लिए बालक को अपने माता-पिता से लिखित अनुमति-पत्र लाना पड़ता है। साही और लोमड़ी जैसे जानवर पिंजड़ों समेत दिये जाते हैं, ताकि कभी वे गुस्से में भरकर बच्चों पर आक्रमण न कर दें।

प्राय: माता-पिता स्वयं अपने बच्चों को लाइब्रेरी लाते हैं। पशु-पक्षी पालने की बच्चों में स्वाभाविक अभिलाषा होती है। किन्तु जब उन्हें कोई पशु या पक्षी खरीद दिया जाता है, तो शुरू में कुछ दिन वे बड़ी उत्सुकता और लगन से उसका पालन-पोषण करते हैं, फिर नयापन चले जाने पर उसके प्रति उदासीन हो जाते हैं। अन्त में सारा भार माता-पिता पर आ पड़ता है। लाइब्रेरी ने यह समस्या सुलझा दी है। लाइब्रेरी से हर सातवें दिन बालक एक नया पशु या पक्षी प्राप्त कर सकता है। इससे उसकी उत्सुकता भी बनी रहती है और अनेक प्रकार के पशु-पक्षियों का परिचय भी उसे प्राप्त होता रहता है।

अभ्यास

१. पशु-लाइब्रेरी से क्या अभिप्राय है ?
२. पशु-लाइब्रेरी में किस प्रकार के जानवर रखे जाते हैं ?
३. सात दिन से अधिक दिन बाहर रहने से पशुओं के बीमार होने का डर क्यों रहता है ?
४. बच्चों को विभिन्न पशुओं के स्वभाव और खान-पान के बारे में पता कैसे लगता है ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे गद्यांश में यथास्थान विराम चिह्न का प्रयोग करो :—

मेरे मित्र ने कहा भाई अधिकांश पशु लाइब्रेरियाँ मोर कबूतर तोते बुलबुल मैना सफेद चूहे खरगोश बिल्लियाँ लोमड़ियाँ और निर्विष सांप रखती है

२. पद-विग्रह सहित समासों का नाम बताओ

पशु-लाइब्रेरी, पशु-पक्षी, जन्म-जात, माता-पिता, हाथी-घोड़े, सर्वप्रथम ।

: १७ :

गीत

क्यों मैं भला करूँ अभिमान ?
नभ के आभूषण तारागण,
करुणामय के हैं करुणा-कण,
करते हैं शीतल भूतल को,
करके नित्य नयन-जल-दान,
क्यों मैं भला करूँ अभिमान ?
जो पथिकों को छाया देकर,
श्रान्ति क्लान्ति हरते हैं सत्वर,
जो फल-फूल सदा देते हैं,
उन तरुओं के कौन समान,
क्यों मैं भला करूँ अभिमान ?
सौरभ जग को सुरभित करता,
पवन उसे है प्रमुदित करता,
मिटते हैं जलधर जल देकर,
मैं क्या करता हूँ बलिदान ?
क्यों मैं भला करूँ अभिमान ?
यदि मैं कुत्सित क्रूर नहीं हूँ,
तो भी उससे दूर नहीं हूँ,
मैं भी एक विश्व का दुर्बल,
प्राणी हूँ मुझको है ज्ञान,
क्यों मैं भला करूँ अभिमान ?

अभ्यास

१. हमें तरुओं, चन्द्र-तारागण और सुरभि, पवन और मेघ से क्या शिक्षा लेनी चाहिए।

व्याकरण

१. अभिमान, प्रमुदित, आभूषण, दुर्बल—इन शब्दों में आये उपसर्ग अलग करो।

२. पद-विग्रह सहित समास-भेद बताओ :—

जल-दान, करुणा-कण, तारागण, फल-फूल।

रचना

१. इन शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो :—

करुणा-कण, श्रान्ति, क्लान्ति, सत्वर, सौरभ, कुत्सित, क्रूर।

: १८ :

ज्वालामुखी के गर्भ में

पाश्चात्य वैज्ञानिक मनुष्य-समाज की ज्ञानवृद्धि के लिए स्वयं मौत के मुँह में प्रवेश करने में भी नहीं चूकते। चार वर्ष पूर्व फ्रेंच वैज्ञानिक आर्पा किरनर ने इस कथन को प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाया। जिस समय ज्वालामुखी पर्वत अग्नि उगलना शुरू करते हैं उस समय क्या होता है, यह जानने के लिए अनेक वैज्ञानिक प्रयत्न कर चुके थे। परन्तु, किसी ने भी ज्वालामुखी के गर्भ में उतरकर इस बात को जानने की चेष्टा नहीं की, परन्तु आर्पा किरनर ज्वालामुखी पर्वत के रहस्य का उद्घाटन करने के लिए यूरोप के एक अत्यन्त भीषण और जलते हुए ज्वालामुखी के गर्भ में उतरे और उन्होंने उसके अन्दर ८०० फुट की गहराई तक जाने में सफलता प्राप्त की। वहाँ से वे

उसके अन्दर के चित्र, वहाँ पाई जाने वाली गैसों के नमूने आदि भी लाने में सफल हुए।

भूमध्य सागर में इटली के समुद्र-तट के पास सिसली द्वीप में स्ट्राम्बेली नामक ज्वालामुखी है। इसे भूमध्य सागर का 'प्रकाश स्तम्भ' भी कहा जा सकता है। आर्पा किरनर इसी ज्वालामुखी के गर्भ में उतरे थे। विगत कई वर्षों से वे उसके अन्दर उतरने की चेष्टा कर रहे थे, पर सम्पूर्ण आयोजनों का ठीक-ठीक प्रबन्ध न हो सकने के कारण निराश हो जाते थे, फिर भी वे चुपचाप बैठने वाले आदमी न थे। निरन्तर प्रयत्न करते रहे, और अन्त में उन्होंने इस महा भीषण कार्य में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की।

जिस समय उन्होंने ज्वालामुखी में प्रवेश किया था, वह अपने पूरे वेग से अग्नि और लावा उगल रहा था। हमारे और आप जैसे व्यक्तियों की तो उसके पास तक फटकने की हिम्मत नहीं हो सकती थी, उसके अन्दर जाना तो बहुत दूर की बात है। परन्तु आधुनिक विज्ञान के चमत्कार से यह सब सम्भव है। जिस बात के अनुमानमात्र से हम और आप सिहर उठते हैं, वह विज्ञान की करामात से सम्भव हो गई है। प्रज्ज्वलित अग्नि और अग्नि के भण्डार ज्वालामुखी में प्रवेश करना भी इसी विज्ञान की करामात ही से सम्भव हुआ।

वैज्ञानिकों ने एसबेस्टस नामक एक पदार्थ ढूँढ़ निकाला है। यह बहुत ही मजबूत और आग में न जलने वाला पदार्थ होता है। इसी की सहायता से आर्पा किरनर ने ज्वालामुखी के अन्दर प्रवेश किया। एसबेस्टस का एक ८०० फुट लम्बा रस्सा तैयार किया गया था। इसी रस्से की सहायता से वे ज्वालामुखी के गर्भ में उतारे गये थे। ऊपर की ओर

उड़ते हुए पत्थर आदि के टुकड़ों से रक्षा पाने के लिए आपने इस्पात का शिरस्त्राण लगा लिया था। आपके कपड़े, जूते, दस्ताने और शरीर पर की अन्य सभी चीजें भी एसबेस्टस की बनी हुई थीं। आपकी पीठ पर काफी मात्रा में आक्सीजन गैस लाद दी गई थी, जिससे आप ज्वालामुखी की विषैली और प्राणनाशक गैसों में भी सुगमतापूर्वक साँस ले सकते थे।

इसके लिए आप कई वर्षों से प्रबन्ध कर रहे थे। आपके मित्रों ने आपकी योजना सुनकर आपको 'पागल' कहा था, परन्तु आपने किसी आपत्ति अथवा विरोध की तनिक भी परवाह नहीं की और अग्नि उगलते हुए ज्वालामुखी के अन्दर प्रवेश करने और वहाँ पर प्रकृति की लीला तथा उसके चरित्र देखने तथा ज्वालामुखी के गर्भ के चित्र आदि लेने का दृढ़ निश्चय कर लिया। इससे पूर्व जिन लोगों ने ज्वालामुखी पहाड़ों का अध्ययन और निरीक्षण किया था, वे उसके अन्दर प्रवेश करने का साहस नहीं कर सके थे। उन्होंने ज्वालामुखी शान्त होने के समय एटना और विसूवियस जैसे पर्वत के मुख तक यात्रा करके ही अपने आपको सन्तुष्ट कर लिया था। उसके अन्दर प्रवेश करना तो एक ओर रहा, वे उसके प्रज्ज्वलित होने के समय उसके पास तक जाने का साहस न कर सके थे। ज्वालामुखी में प्रवेश करने के पूर्व आर्पो किरनर ने स्वयं कहा था—

"यदि मैं अपनी योजना में सफल हो गया तो प्रकृति की वे लीलाएँ देखूँगा जिन्हें देखने का संसार में किसी को भी सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ है। यदि मैं अग्नि उगलने वाले पर्वत और उसके नीचे के पाताल-लोक की इस अभूतपूर्व यात्रा से सकुशल वापस आ गया तो अपने साथ पर्वत के गर्भ से अत्यन्त

रोचक सामग्री—ठोस पदार्थ और गैसों के नमूने—लाऊँगा। अतः मैंने प्रयत्न करने का निश्चय कर लिया है।

मैंने भूमध्य सागर में सिसली के उत्तर में स्थित स्ट्राम्बोली को अपने प्रयोग के लिए चुना है। यूरोप भर में केवल यही एक ऐसा ज्वालामुखी है जो सदैव बिना रुके हुए अग्नि वमन करता रहता है। मुझे विश्वास भी है कि इसके गर्भ के अन्दर ही मैं मनचाही बातें पा सकूँगा।"

× × ×

"इसके अतिरिक्त यह ज्वालामुखी मेरा पूर्व-परिचित था। मैं कई बार इसका अध्ययन कर चुका था। मैं इसके ऊपर चढ़ चुका था, इसके मुख तक गया था और यह भली-भाँति जानता था कि प्रति वर्ष इसकी चोटी के आकार-प्रकार में परिवर्तन होते रहते हैं। इसके गर्भ में उतरने के लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ़ने के विचार से मैंने एक बार फिर इसकी यात्रा की और वहाँ से लौटकर मैंने अपनी यात्रा का सारा सामान ठीक किया।"

× × ×

"आवश्यक सामग्री को स्ट्राम्बोली की चोटी तक पहुँचाने में बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। स्ट्राम्बोली पहाड़ समुद्र में जल के बीचों-बीच सिर उठाये खड़ा है। उसके आसपास डाल या अच्छा किनारा भी नहीं है, फिर भी पहले ही से निश्चित स्थान पर समस्त सामग्री पहुँचाई गई। गिर्री की सहायता से पर्वत के अन्दर उतरने का प्रबन्ध किया गया। अन्दर से बाहर की ओर सन्देश भेजने के लिए मैं अपने हाथ में बिजली का एक लैम्प ले गया था। बिजली के तार मुझ तक एसबेस्टस रस्सों के सहारे पहुँचाये गये थे।

ज्यों-ज्यों मैं उस भीषण अग्नि उगलने वाले पर्वत के भीतर उतारा जाने लगा, त्यों-त्यों अपने कार्य की भीषणता और अपने जीवन के खतरे का अनुभव करने लगा। मैं यह भी अच्छी तरह से जानता था कि मेरे जिन्दा वापिस आने में सन्देह है। मेरी समस्त सामग्रियाँ अपर्याप्त सिद्ध हो सकती हैं। मेरा हृदय और फेफड़े गैसों की गर्मी और उसके प्रभाव को शायद न सहन कर सकें।

मैं ज्वालामुखी के गर्भ में लटका हुआ था। उस समय यह नहीं जानता था कि मैं कहाँ जा रहा हूँ। मैं यह भी नहीं जानता था कि मुझे कहाँ पर अपना पैर रखने को मिलेगा। ज्वालामुखी के नीचे पहुँच जाने पर मेरी क्या दशा होगी, मुझे वहाँ पर क्या मिलेगा, मैं यह सब कुछ भी नहीं जानता था। वहाँ मुझे ठोस चट्टान मिलेगी या उबलता हुआ लावा या चारों ओर प्रज्ज्वलित अग्नि की लपटें, सो मैं कुछ भी नहीं कह सकता था।

ज्यों-ज्यों मैं नीचे की ओर उतरता जाता था मुझे प्रति-क्षण यही मालूम होता था कि अब रस्सी टूटी और अब मैं सदा के लिए इस विकराल पर्वत के पेट में अदृश्य हुआ। परन्तु मैं अपने चारों ओर की चीजों को अच्छी तरह से देखता जाता था। कभी मेरे आस-पास की पहाड़ी दीवार बिलकुल काली दिखाई देती थी और कभी लाल और पीली। कभी-कभी इस दीवार में सैकड़ों छोटे-बड़े छिद्र दिखाई देते थे जिनसे गंधक की लपटें निकल रही थीं। मुझे अपने नीचे कई स्थान कटे दिखाई दिये। वे सब धुएँ से आच्छादित थे। जब मैंने अपनी आँखों को ऊपर की ओर किया तब मुझे गहराई का कुछ ख्याल आया। उस समय मैंने अपने आपसे

प्रश्न किया कि क्या यह रस्सा समस्त बोझ और दबाव सहन कर सकेगा ? क्या वे लोग मुझे ऊपर खींच लेने में समर्थ होंगे ?

एकाएक मैंने अनुभव किया कि मैं बिलकुल नीचे आ गया हूँ। मैं पहाड़ की चोटी से ६०० फुट नीचे था। चट्टान बहुत ज्यादा गर्म थी, पर काफी सख्त भी थी। मैं खड़ा हो सकता था। मैंने चट्टान का तापक्रम नापा। मुझे मालूम हुआ कि कहीं-कहीं उसकी गर्मी २१२ डिगरी फारेन-हाइट* तक पहुँच जाती है। मेरे आस-पास की वायु की हरारत भी १४० डिगरी थी। हवा में विषैला गंधक का धुआँ भरा था, पर अपनी आक्सीजन गैस की सहायता से मैं भली-भाँति साँस लेने में समर्थ था। आखिर मैंने अपने आस-पास की चट्टानों और अन्य चीजों का निरीक्षण आरम्भ किया।

मैंने अपने आपको रस्से से अलग कर लिया और चारों ओर घूम-घूम कर निरीक्षण करने लगा। यहाँ पर मुझे और भी गहरे गड्ढे दिखाई पड़े। गड्ढे क्या थे अच्छे खासे कुएँ थे जिनके व्यास १० से ३० फुट तक थे। थोड़ी-थोड़ी देर बाद इन गड्ढों से बड़े वेग के साथ लावा आदि निकलता था। इन गड्ढों का ढाल ऐसा था जिससे लावा निकल कर सदैव एक ही ओर जमा होता जाता था। इनके अग्नि उगलने के समय का ठीक-ठीक हिसाब लगाकर मैंने क्रम से इनके मुखों का निरीक्षण किया और कुछ के अन्दर तो इस तरह झाँक कर भी देखा जैसे कुएँ में झाँक कर देखा करते हैं।

---

* पानी के खौलने का तापक्रम।

मैंने वहाँ क्या देखा ? घना धुआँ और रंग-बिरंगी गैसें और इन सब के नीचे खौलते हुए लावा का समुद्र। ऐसा मालूम होता था मानो नीचे तरल अग्नि का विक्षुब्ध सागर गर्जना कर रहा हो। जिस समय मैं एक कुएँ का निरीक्षण कर रहा था, उसमें एक जबरदस्त तूफान-सा आया और ऐसा मालूम हुआ कि कुछ ही क्षणों में वह स्थान मेरे सहित उड़-कर न मालूम कहाँ जाकर गिरेगा। अब मुझे प्राण-रक्षा के लिए अपने स्थान से भागना आवश्यक हो गया। मुझे वहाँ से हटे हुए मुश्किल से एक सैकिण्ड ही बीता होगा कि बड़े जोर का धड़ाका हुआ और उस विशालकाय गर्त से उबलते हुए लावा का फव्वारा-सा निकलने लगा। उस फव्वारे ने वायु में लावा की सैकड़ों फुट ऊँची धाराएँ उत्पन्न कर दीं। बहुत ऊँचे तक जाकर वह फिर उसी गड्ढे में गिर पड़ता था। बहुत-सा हिस्सा ज्वालामुखी के अन्दर चारों ओर बिखर जाता था और कुछ भाग ८०० फुट ऊँचा उठकर पर्वत की चोटी को छूता हुआ तीव्र गगन-भेदी शब्द उत्पन्न करता हुआ समुद्र में गिर पड़ता था।

मुझे उन अग्नि-शिखाओं के बीच में पूरे तीन घण्टे लग गये। विशालकाय कूपों से लावा उगलने के समय का हिसाब लगाकर मैं अपने प्राणों की रक्षा के लिए इधर-उधर घूमता फिरता था और बराबर गैसों, ठोस पदार्थों और वहाँ पर पाये जाने वाले खनिज पदार्थों के नमूने इकट्ठा करता जाता था। मैं अपने कैमरे का प्रयोग भी बराबर करता जाता था, तथा कभी न भूलने वाले दृश्यों का अध्ययन तथा उनके चित्र आदि लेता जाता था।

जब मुझे इस तरह कार्य करते हुए काफी देर हो गई

और मैं बहुत थकावट अनुभव करने लगा, तब मैंने ऊपर अपने सहायकों को निश्चित संकेत किया। उन्होंने मुझे खींच लिया। ऊपर खींचे जाने में मुझे जो कष्ट और पीड़ा हुई उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास पर्याप्त शब्द भी नहीं हैं। मेरी जड़ता काफूर हो चुकी थी। मजबूरन मुझे गंधक से परिपूर्ण धुएँ में साँस लेनी पड़ रही थी। जैसे-जैसे मैं ताजी-ताजी हवा में ऊपर की ओर आता गया, मेरे फेफड़ों ने काम करना बन्द कर दिया। ऊपर पहुँचने से पहले मैं बिलकुल बेहोश हो गया और बिलकुल निर्जीव-सा पड़ रहा। जब मैं अच्छा हुआ, तब मुझे पूर्ण शान्ति अनुभव हुई। इतना अधिक परिश्रम करने के बाद और साक्षात मृत्यु के मुख से सही सलामत जिन्दा बच जाने पर मेरे लिए अत्यन्त प्रसन्न होना बिलकुल स्वाभाविक था। मेरी प्रसन्नता इस बात से और भी अधिक बढ़ गई थी कि मैंने एक ऐसे साहस और महत्त्वपूर्ण कार्य में सफलता प्राप्त की थी जिसे उस समय तक सब लोग नितान्त असम्भव समझे हुए थे।"

अभ्यास

१. आर्या किरनर ज्वालामुखी के गर्भ में क्यों उतरे थे ?
२. आग में न जलने वाले पदार्थ का क्या नाम है ?
३. आर्या किरनर ने ज्वालामुखी के गर्भ में क्या-क्या देखा ?
४. आर्या किरनर कितनी देर ज्वालामुखी के भीतर रहे और वहाँ से क्या-क्या चीजें लाये ?
५. आर्या किरनर नीचे कैसे उतरे और उन्हें बाहर कैसे निकाला गया ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे शब्दों में से रूढ़ि और यौगिक शब्दों को छाँटो :—
गर्भ, आग, मनुष्य-समाज, प्राण-नाशक, पागल, पास, पूर्व-परिचित, सदैव।

२. पद-विग्रह सहित समास-भेद लिखो :—

मानव-समाज, समुद्र-तट, प्रकाश-स्तम्भ, शिरस्त्राण, पूर्व-परिचित, विशालकाय, इधर-उधर ।

रचना

१. निम्नलिखित शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो :—

निर्जीव, परिपूर्ण, नितान्त, तापक्रम, आच्छादित ।

२. विपरीतार्थक शब्द बताओ :—

गहराई, सम्पूर्ण, निश्चित, आवश्यक ।

: २० :

छात्र के कर्त्तव्य

प्यारे विद्यार्थियो, देश के दृग के तारे,
सोचो तो तुम जरा कि क्या कर्त्तव्य तुम्हारे।
क्यों यह शिक्षा आज पा रहे तुम सुखकारी,
क्यों तुम पर इस तरह प्रीति है सबकी भारी।
सम्पूर्ण देश की है लगी, दृष्टि तुम्हीं पर किस लिए,
इन बातों को अच्छी तरह, तुम्हें सोचना चाहिए।

(२)

जग को स्वप्न-समान भूलकर भी मत मानो,
इसको विस्तृत कर्मक्षेत्र, छात्रो तुम जानो।
जो जन जैसा बीज यहाँ सुख से बोता है,
वैसा ही फल उसे प्राप्त हर-दम होता है।
निज कर्त्तव्याकर्त्तव्य का, यहाँ न जिसको ज्ञान है,
उससे तो है पशु ही भला, वह नर अन्ध-समान है।

(३)

जो निश्चित कर्त्तव्य तुम्हारे हैं सुखकारी,
कर लो उनके लिये अभी से तुम तैयारी।
छात्रो, यह है समय न पल-भर भी खोने का,
यह अवसर फिर कभी प्राप्त न तुम्हें होने का।
मत चूको तुम आलस्य-वश, अविरल जी से श्रम करो,
गुण ग्रहण करो, अवगुण तजो, विघ्नों से तुम मत डरो।

(४)

यही तुम्हारा समय ज्ञान-संचय करने का,
संयम-शील, सुशील, सदाचारी बनने का।
सुवृत्तियों की ओर तुम्हें है चित्त झुकाना,
निज शरीर को तुम्हें खूब है पुष्ट बनाना।
निज भावी उन्नति-बेलि का, बीज तुम्हें बोना अभी,
जीवन-यात्रा के हित तुम्हें, सज्जित है होना अभी।

(५)

क्या तुमने कर लिया पूर्ण पण्डित हो करके,
अगर किया सन्तोष पेट ही अपना भरके।
उदर-पूर्ति तो निरे निरक्षर भी कर लेते,
किसी तरह निज उदर कीट-कृमि भी भर लेते।
की मातृ-भूमि की जो कहीं, तुमने सेवा कुछ नहीं,
तो पढ़ने-लिखने का हुआ, कष्ट तुम्हारा व्यर्थ ही।

(६)

बरसाकर जल ताप घनावलि उसका हरती,
चलकर सुरभित पवन उसे सौरभ-युत करती।
कोकिल अपना मधुर गान है उसे सुनाती,
प्रेम-सहित तरु-राजि फूल फल उसे चढ़ाती।
सब जड़ पदार्थ भी कर रहे, मातृ-भूमि उपचार हैं,
जो हम न करें तो क्या नहीं, हमें कोटि धिक्कार है।

(७)

मित्रो, जागृति देशबन्धुओं में फैलाओ,
उनको तुम सब नई-नई बातें सिखलाओ।
देकर समुचित सीख उन्हें उत्साहित कर दो,
उन्नति की कामना हृदय में उनके भर दो।

समझाओ उनको यह कि क्यों, दुःखों से ये हैं घिरे,
निज दोषों से वे इस तरह ऊँचे चढ़कर हैं गिरे।

(८)

भारत की व्यापार-बुद्धि में तुम लग जाओ,
शिल्प और वाणिज्य यहाँ के खूब बढ़ाओ।
भाँति-भाँति के यहाँ कला-कौशल फैलाओ,
सब लोगों की चित्त-वृत्ति इस ओर झुकाओ।
खोलो अपने उद्योग से, विविध कारखाने यहाँ,
जिनमें आवश्यक वस्तुएँ, सभी लगें बनने यहाँ।

अभ्यास

१. विद्यार्थियों के क्या-क्या कर्तव्य हैं ?
२. शिक्षा प्राप्त करने से क्या-क्या लाभ है ?
३. मनुष्य और पशु में क्या अन्तर है ?
४. छात्रावस्था में विशेष रूप से किस काम पर जोर दिया जाना चाहिए ?
५. आप भारत की उन्नति के लिए क्या-क्या कर सकते हैं ?

व्याकरण

१. 'सोचना' क्रिया के विधि अर्थ में तीनों पुरुषों में रूप लिखो।
२. इस पाठ में जितने विध्यर्थक रूप आये हैं, उन्हें ढूँढ़कर लिखो।
३. इन शब्दों से भाववाचक संज्ञाएँ बनाओ :—
दुःखी, उन्नत, पढ़ना, लिखना, भूलना, चूकना, विस्तृत, भला, तैयार, पशु।

रचना

१. इस कविता के आशय को अपनी भाषा में लिखो।
२. 'छात्रों का कर्तव्य' विषय पर निबन्ध लिखो।
३. अर्थ बताओ और प्रत्येक का दो-दो वाक्यों में प्रयोग करो :—
दृग, कर्मक्षेत्र, संचय, पुष्ट, उदरपूर्ति, शिल्प, तरु-राजि।

: २१ :

चरित्र-संगठन

मनुष्य की विशेषता उसके चरित्र में है। चरित्र के कारण ही एक मनुष्य दूसरे से अधिक आदरणीय समझा जाता है। मनुष्य का आदर उसके पद, धन व विचार के कारण होता है, परन्तु ये सब एक प्रकार से बाहरी हैं, स्थायी नहीं। यदि स्थायी भी हों, तो उसके लिए जो आदर होता है, वह भय के कारण। धन का आदर वही करेगा जिसको धनी से कुछ लाभ उठाने की इच्छा हो। विद्या का मान सज्जन अवश्य करते हैं। वहाँ भी जब विद्या, विनय एवं चरित्र से युक्त हो। विद्या, धन, बल तथा पद होते हुए भी रावण अपने राक्षसी कर्म के कारण निन्दनीय था। राक्षस साक्षर होकर वन्दनीय नहीं बन जाते।

मनुष्य का मूल्य उसके चरित्र में है। चरित्र में ही उसके आत्मबल का प्रकाश होता है, और यह पता लगता है कि उसकी आत्मा कितनी बलवान् है। मनुष्य का चरित्र ही बतलाता है कि वह कितने पानी में है।

यह चरित्र क्या है जो इतना महत्त्व रखता है? यह चरित्र उन गुणों का समूह है जो हमारे व्यवहार से सम्बन्ध रखते हैं। दार्शनिक बुद्धि, वैज्ञानिक कौशल, काव्य की प्रतिभा सब वांछनीय हैं, परन्तु ये हमारे चरित्र से सम्बन्ध नहीं रखते। फिर, चरित्र में कौन-सी बात आती है? विनय, उदारता, लालच में न पड़ना, धैर्य, सत्य-भाषण, वचन का प्रतिपालन करना और कर्त्तव्य-परायणता, ये सब गुण चरित्र में आते हैं। चरित्र में इन सब बातों के अतिरिक्त और भी बहुत-सी बातें

हैं, परन्तु ये मुख्य हैं। ये सब गुण प्रायः स्वाभाविक होते हैं, परन्तु अभ्यास से बढ़ाये जाते हैं। अभ्यास में सत्संग से बहुत सहायता मिलती है। अभ्यास के लिए बाल्यकाल ही विशेष उपयुक्त है। यह काल बनाव का है। बनते समय मनुष्य जैसा बन जाय वैसा ही वह जीवन-पर्यन्त रहता है। बाल्यकाल में स्नायु कोमल रहती हैं तथा वह अन्य संस्कारों से दूषित नहीं होतीं। इस कारण, जो उस काल में अभ्यास डाला जाता है, वह सहज ही में सिद्ध हो जाता है। प्रौढ़ावस्था में अन्य संस्कारों के दृढ़ हो जाने के कारण नये संस्कार कठिनाई से जमते हैं।

मनुष्य-जीवन का प्रभात, जिसमें सब प्रकार की शक्तियों के विकास की सम्भावना होती है, विद्यार्थी-जीवन में व्यतीत होता है। जो लोग इस विद्यार्थी-जीवन में हमारे पथ-प्रदर्शक हैं, उनका परम उत्तरदायित्व है कि यह काल केवल ज्ञान-संग्रह में ही न चला जाये। बाल्यावस्था फिर लौटकर नहीं आती। भावी चरित्र-निर्माण करने का यही सुअवसर है। विद्यार्थी और शिक्षक अपने-अपने उत्तरदायित्व को समझ कर निम्न-लिखित सिद्धान्तों पर ध्यान दें और इनसे विद्यार्थियों के चरित्र-संगठन में सहायता लें। यद्यपि ये सिद्धान्त प्राचीन काल से बतलाये जा रहे हैं तथापि इनके प्रचार की आज भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी प्राचीन काल में थी।

विनय

विनय विद्या का भूषण है। बिना विनय के विद्या शोभा नहीं देती। श्रीमद्भगवद्गीता में ब्राह्मण का विशेषण 'विद्या-विनय-सम्पन्न' कहा है। जिस विद्या के साथ विनय नहीं है उससे कोई लाभ नहीं हो सकता। विनय केवल विद्या को ही नहीं, वरन् धन और बल दोनों को ही शोभा देती है। भृगुजी

ने भगवान् विष्णु के वक्षस्थल पर लात मारी तो भगवान् पूछने लगे कि महाराज ! आपके पैर में चोट तो नहीं आई। विनय का क्या ही उत्तम आदर्श है ! विनय केवल शिष्टाचार के लिए ही आवश्यक नहीं है, वरन् इससे आत्मा की शुद्धि होती है। विनयशील मनुष्य अभिमान के दोष से बचा रहता है। नम्र-भाव दूसरों में प्रेम-भाव उत्पन्न करता है और अपने में अपूर्व शान्ति अनुभव करता है। धन, बल और विद्या के होते हुए भी जो विनय प्रकट करता है उसको कोई कायर नहीं कह सकता। भय-वश विनय आत्मा को गिराती है, किन्तु प्रेम और निरभिमानता की विनय आत्मा का उत्थान करती है।

विनय का अभाव एक प्रकार का खोखलापन प्रकट करता है। जिन लोगों में कोई श्लाघनीय गुण नहीं होता वे अपनी ऐंठ तथा डाँट-फटकार से लोगों पर प्रभाव जमाते हैं, किन्तु गुणवानों को इसकी आवश्यकता नहीं। उनका प्रभाव स्वतः-सिद्ध है। यदि विनयशील मनुष्य का समाज में प्रभाव थोड़ा हो, तो विनयशील मनुष्य का दोष नहीं, यह समाज का ही दोष है। इसके अतिरिक्त प्रेम का प्रभाव चाहे थोड़ा हो, पर दबाव के प्रभाव की अपेक्षा वह चिरस्थायी होता है। यद्यपि थोड़ी देर के लिए मान भी लिया जाय कि विनय सब स्थानों में काम नहीं देती—जैसे शत्रु के सम्मुख—तथापि हमको यह कहना पड़ेगा कि विनयशील व्यक्ति को ऐसे अवसर कम आयेंगे कि उनको अपनी विनय के कारण गौरव-हानि का दुःखद अनुभव करना पड़े।

इसके अतिरिक्त जीवन में अधिकांश ऐसे अवसर आते हैं जिनमें विनय से सगौरव कार्य-साधन हो सकता है। खेद तो इस बात का है कि हम लोग मित्रों और गुरुजनों के साथ भी

विनय का व्यवहार नहीं करते। विनय के साथ निरभिमानता, मनुष्य-जाति का आदर, सहनशीलता इत्यादि अनेक सद्गुण लगे हुए हैं। इनके अभ्यास में इन सब गुणों का अभ्यास हो जाता है।

उदारता

उदारता का अभिप्राय केवल निःसंकोच भाव से किसी को धन दे डालना ही नहीं, वरन् दूसरों के प्रति उदार-भाव रखना भी है। उदार पुरुष सदा दूसरों के विचारों का आदर करता है और समाज में सेवक-भाव से रहता है। 'उदार-चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' में जो उपदेश दिया गया है, वह केवल धन की उदारता नहीं, वरन् उसमें प्रेम और सेवा की भी उदारता सम्मिलित है। बहुत-से लोग आपकी धन-सम्बन्धी उदारता की अपेक्षा नहीं करते। बहुत-से निर्धन भी इस बात को अपनी निर्धनता के गौरव के विरुद्ध समझते हैं कि वे आपकी आर्थिक सहायता लें, किन्तु वे आपके उदारता-पूर्ण शब्दों के सदा भूखे रहते हैं।

यह न समझिए कि केवल धन से ही उदारता हो सकती है। सच्ची उदारता इस बात में है कि मनुष्य को मनुष्य समझा जाय, उसके भावों का उतना ही आदर किया जाय जितना अपने का। ऐसा आदर उदारता नहीं है, वरन् कर्तव्य है। प्रत्येक मनुष्य में आदरणीय गुण होते हैं। यह न समझना चाहिए कि धन, विद्या अथवा पद ही आदर का विषय है। गरीब आदमी यदि ईमानदार है तो वह बेईमान धनाढ्य की अपेक्षा कहीं आदरणीय है, क्योंकि गरीबी में ईमानदार रहना और भी कठिन है। गरीब ही हमारे आदर का पात्र है। मेहनत करने वालों में एक दैवी प्रभा रहती है जो सदा

पूजा-योग्य है। जिनको लोग नीच एवं दलित समझते हैं उनके प्रति आदर-भाव रखना मनुष्य की आत्मा को सुख तथा शान्ति देता है।

जो लोग अपने साथियों के साथ आदर-भाव रखते हैं—उनकी भूलों को, उनके हठ तथा वैर को स्वयं उपेक्षापूर्वक क्षमा कर देते हैं, ऐसे लोग परम उदार हैं। यह उदारता धन की उदारता की अपेक्षा कठिनतर है, तथा उसी अनुपात में अधिक श्लाघनीय भी है। धन की उदारता के साथ सबसे बड़ी एक और उदारता की आवश्यकता है। वह यह कि उपकृत के प्रति किसी प्रकार का अहसान न जताया जाय। अहसान दिखाना उपकृत को नीचा दिखाना है। अहसान जताकर उपकार करना अनुपकार है। इसीलिए अपने यहाँ गुप्तदान का बड़ा महत्त्व माना गया है।

लालच में न पड़ना

मनुष्य जितना ही बलवान् माना गया है, उतना ही कम-जोर है। जरा से अविचार में मनुष्य का पतन हो जाता है और वर्षों का तप धूल में मिल जाता है। लालच केवल धन का ही नहीं, वरन् हर प्रकार का होता है। लालच इसलिए दिया जाता है कि मनुष्य स्वकर्तव्य से च्युत हो जाय। किन्तु मनुष्य की श्रेष्ठता इसी में है कि वह न्याय-पथ से न हटे। महाराज दिलीप को हर प्रकार का लालच दिया गया, किन्तु वे कर्तव्य से न हटे। प्राप्त वस्तु के त्याग से, अप्राप्त परन्तु प्राप्त वस्तु का त्याग अधिक कठिन है।

यद्यपि लालच के सुलभ प्रसंग होते हुए लालच के ऊपर विजय पाने में बहादुरी है, तथापि विज्ञ पुरुष को यही चाहिए कि वह लालच से दूर रहे। ईसाई लोग ईश्वर से प्रार्थना

करते हैं—'या यीशु ! मुझे इम्तिहान में मत डाल।' जहाँ तक हो, थोड़े से भी लालच से बचने का प्रयत्न किया जाय। जो लोग थोड़े लालच पर विजय नहीं पा सकते, वे बड़े लालच से कैसे बच सकते हैं ? हमारे यहाँ भगवान् श्री रामचन्द्रजी का ज्वलन्त उदाहरण मौजूद है। उन्होंने साम्राज्य का लालच छोड़ा, पर कर्तव्य से विमुख न हुए। यदि वे जरा हील डालते तो महाराज दशरथ तुरन्त अपने विचार से फिर जाते।

यद्यपि लालच में पड़ जाने के उदाहरण विश्वामित्र आदि हैं, तथापि उनके साथ भीष्म पितामह आदि के उपाख्यान में हमारे आदर्श मौजूद हैं। जो लोग लालच से बच सकते हैं, अपनी इच्छाओं को रोक सकते हैं, वे ही शक्तिसम्पन्न और प्रभावशाली बनने में समर्थ होते हैं।

धैर्य

कठिनाइयों में चित्त को स्थिर रखना धैर्य कहलाता है। मनुष्य का जीवन-पथ कंटकाकीर्ण है। मनुष्य-जीवन में कठिनाइयाँ ही कठिनाइयाँ हैं किन्तु उनका सामना ज्ञानी लोग ज्ञान से करते हैं, मूर्ख लोग रोकर करते हैं। कठिन से कठिन स्थिति में प्रसन्न रहना आत्मा की उच्चता का सूचक है। हमको अपनी आध्यात्मिकता का गौरव होना चाहिए। कठिनाइयाँ प्रायः बाह्य होती हैं। यदि हम उन पर विजय पा लें तो अच्छा ही है, और विजय न पा सकें तो दुःखी होने से वे बढ़ती ही हैं घटती नहीं। हमको अपनी शक्तियों से निरस्त्र न होना चाहिए। कठिनाइयों से दुःखित न होना ही उन पर विजय पाना है। कठिनाइयों में दुःखित होना अपने विपक्षियों की जीत स्वीकार करना है। राजा हरिश्चन्द्र धैर्य के एक ज्वलन्त उदाहरण हैं। श्री रामचन्द्रजी के लिए कहा जाता

है कि राज्याभिषेक के कारण उनको हर्ष नहीं हुआ और वन-वास से म्लान-मुख नहीं हुए। इसी से वे जगद्वन्दनीय हो रहे हैं।

सहकारिता

यद्यपि सहकारिता के लाभ प्रत्यक्ष हैं, तथापि कुछ लोग असहकारिता में ही अपना गौरव मानते हैं। लोगों का यह भ्रम है कि सहकारिता में हम अपनी न्यूनता स्वीकार करते हैं। मनुष्य सामाजिक जीव है। उसका अकेले काम चलना अत्यन्त कठिन हो जायगा। हम नहीं जानते कि हम भी दूसरों की सहकारिता से कितना लाभ उठाते हैं। स्वयं अपनी सहकारिता से दूसरों को वंचित रखना कृतघ्नता है। सहकारिता में मनुष्य की एकता एवं समाज की स्थिति का मूल है। सहकारिता को चरित्र के भीतर इसीलिए रखा है कि उसमें एक प्रकार का वृथाभिमान त्यागना पड़ता है।

सत्य बोलना और वचन का पालन करना

यद्यपि सत्य बोलना सबसे सहज बात है, क्योंकि उसमें नमक-मिर्च के लिए बुद्धि का प्रयोग नहीं करना पड़ता, तथापि सत्य बोलने के लिए बड़े आध्यात्मिक बल की आवश्यकता है। जहाँ तक हो, अप्रिय सत्य न बोला जाय, किन्तु जहाँ अप्रिय सत्य न बोलने से समाज के हित की हानि होती है, वहाँ उसको प्रियता के लिए दबाना पाप है। चरित्रवान् पुरुष को अपनी आत्मा में इतना बल रखना चाहिए कि वह सत्य को निर्भयता के साथ कह सके। सत्य मनसावाचाकर्मणा होना चाहिए। जो कहे वही करे, और जो कर सके वही कहे, तथा कहकर फिर न हटे—"प्रान जाहि परि बचन न जाई" का आदर्श अपने सामने रखे। इसका अर्थ यह नहीं है कि हठवाद

करे, किन्तु जब तक वह एक बात को सत्य समझे, उस पर दृढ़ रहे ।

कर्तव्यपरायणता

सत्य के अतिरिक्त कर्तव्य में और भी बहुत-सी बातें आती हैं, अतः शेष में एक व्यापक बात रख दी गई । यद्यपि यह कहना कठिन है कि कर्तव्य क्या है, तथापि मोटी रीति से सब लोग अपना-अपना कर्तव्य जानते हैं । जो बातें बचने की हैं उनसे बचना चाहिए, और जो करने की हैं उनको सौ हानि उठाकर भी करना चाहिए । बस यही कर्तव्यपरायणता है । अपने कर्तव्य में शैथिल्य न डालना चाहिए । जहाँ जरा-सा छिद्र हुआ वहाँ समझना चाहिए कि पतन का द्वार खुल गया ।

कर्तव्य वह नहीं जो केवल कागज पर लिखा हो । प्रत्येक स्थिति के अनुकूल अपना कर्तव्य निश्चित कर हमको उसके सम्पादन में आरूढ़ रहना चाहिए । हमको केवल कर्तव्य ही नहीं वरन् अपने कर्तव्य से भी अधिक करने के लिए तैयार रहना चाहिए । अपना पाठ याद करना हमारा कर्तव्य है, किन्तु सामने के घर में आग लगी हो तो पाठ याद करने की अपेक्षा आग बुझाना ही हमारा कर्तव्य है । वास्तव में जो कुछ हमें करना चाहिए, वही कर्तव्य है ।

जिस काम को तुम कर सकते हो—फिर चाहे वह दूसरे के करने का ही हो—और यदि तुम देखो कि तुम्हारे न करने से दूसरे के हित की हानि होती है, तो उसको करना अपना परम कर्तव्य समझो । जो तुम्हारा कर्तव्य है उससे कदापि न हटो—उसमें चाहे लोग निन्दा करें चाहे स्तुति । कर्तव्य के पालन से ही हमारा आत्म-गौरव रह सकता है । आलस्यवश या लोभवश कर्तव्य से च्युत होना ही हमारा पतन है ।

कर्त्तव्य पालन के लिए प्रतिक्षण अभ्यास का अवसर है। इस अभ्यास को करते रहने से ही हमारी आत्मा शुद्ध एवं पवित्र बनकर उन्नत हो जायगी। हम अपनी उन्नति आप ही कर सकते हैं। आत्मा का उद्धार आत्मा से ही होना है।

अभ्यास

१. मनुष्य की परख किस बात से होती है ?
२. 'चरित्र' से क्या अभिप्राय है ?
३. मनुष्य जीवन का प्रभात कौन-सी अवस्था है और उसमें क्या करना चाहिए ?
४. चरित्र के प्रमुख गुण क्या-क्या है ?

व्याकरण

१. निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद करो :—
परमावश्यक, भगवद्गीता, बाल्यावस्था, प्रौढ़ावस्था, कंटकाकीर्ण, राज्याभिषेक, तथापि।

२. इक, अनीय — इन प्रत्ययों से बने शब्द स्वाभाविक, निन्दनीय आदि पाठ में प्रयुक्त हुए हैं। 'इक' और 'अनीय' प्रत्ययों वाले अन्य सभी शब्द इस पाठ में से चुनकर एक सूची तैयार करो।

रचना

१. 'नम्रता' पर एक छोटा-सा निबन्ध लिखो।
२. नीचे लिखे शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो :—
वन्दनीय, कौशल, वांछनीय, समूह, जीवन-पर्यन्त, सुअवसर, नम्रभाव, उत्थान।

निर्देश

इस पाठ में बतलाये हुए गुणों को सीखकर अपने चरित्र का विकास करने का यत्न करो।

: २२ :

नया सवेरा

बड़ी इन्तजारी के बाद घड़ी ने साढ़े आठ की घंटी बजाई। मनोहर और ललिता कुरसियों पर खड़े हो गये, क्योंकि रेडियो दीवार पर लगे ताक पर रक्खा था, और काफी ऊँचा था। एक मोटी आवाज ने कहना शुरू किया, "हम ऑल इंडिया रेडियो दिल्ली से बोल रहे हैं। अब श्री जवाहरलाल नेहरू 'बालकों के सप्ताह' के उपलक्ष में देश के बालकों से बातचीत करेंगे।"

मनोहर और ललिता तालियाँ बजा-बजा कर उछल पड़े। फिर अधिक एकाग्र हो रेडियो सुनने लगे। श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहना शुरू किया, "देश के बालक और बालिकाओ, मैं आज बहुत खुश हूँ, इसलिए कि आज मुझे देश के नौनिहालों से बातचीत करने का मौका मिला है। आज तुम बच्चे हो, कल तुम्हारे कंधे पर देश का भार आ पड़ेगा। तब तुम राष्ट्र के निर्माता होगे। तुम में से कोई जज बनेगा, कोई इंजीनियर, कोई महाकवि बनेगा, कोई दार्शनिक, कोई वैज्ञानिक होगा, और कोई सेनापति। गर्ज कि देश की हर प्रकार की उन्नति तुम्हारी उन्नति पर ही सम्भव है। उसके लिए तुम्हें अभी से तैयारी करनी चाहिए। मेरी इच्छा है कि तुम ऐसे राष्ट्र की स्थापना कर सको, जिसमें बलवान कमजोरों को न सता सकें, जिसमें सब भाई-भाई की तरह रह सकें, और जिसमें अविद्या अन्याय और अभाव का नाम-निशान तक न हो....."

भाषण समाप्त होते ही दोनों फर्श पर कूद पड़े। मनोहर बोला, "मैं जज बनूँगा।"

"और मैं....." ललिता ने कहा, "मैं पुलिस इन्सपेक्टर बनूँगी।"

"पुलिस इन्सपेक्टर ? लड़कियाँ पुलिस इन्सपेक्टर कैसे बन सकती हैं ?" कह कर मनोहर हँस पड़ा। ललिता कुछ उदास हो गई। पिताजी के पास जाकर धीरे से पूछा, "पिताजी, क्या मैं पुलिस इन्सपेक्टर नहीं बन सकती ?"

पिताजी ने प्यार से उसके बालों पर हाथ फेरा। बोले, "कौन कहता है, तुम पुलिस इन्सपेक्टर नहीं बन सकतीं ? लड़कियाँ भी लड़कों की तरह हर काम कर सकती हैं।"

ललिता उछलती हुई मनोहर के पास आकर बोली, "देखो, पिताजी कहते हैं, मैं पुलिस इन्सपेक्टर बन सकती हूँ।"

"तब तो बड़ी अच्छी बात है," मनोहर बोला, "तुम अपराधियों को पकड़ कर मेरे पास लाया करना, और मैं उन्हें सजा दिया करूँगा।"

"हम देश से अपराधों की जड़ें उखाड़ फेंकेंगे। लेकिन कल यदि मैंने तुम्हारी चोरी पकड़ी, तो मैं तुमको भी गिरफ्तार कर लूँगी।"

"और मैं अपने को ही सजा दूँगा।" कहकर मनोहर खिल-खिलाकर हँस पड़ा। ललिता भी हँस पड़ी। पिताजी तो हँस-हँस कर लोट-पोट हो गये। इसी प्रकार बड़ी देर तक बातें करने के बाद, वे कल के नये सवेरे के इन्तजार में सो गये।

उस रात मनोहर ने सपने में देखा कि वह देश को अपने कंधों पर उठाकर हवा में उड़ता जा रहा है, ठीक उसी तरह जिस तरह हनुमान द्रोणाचल को कंधे पर उठाकर उड़े थे।

फिर उसने अपने को एक अदालत में जज की कुरसी पर बैठा पाया। एक वकील एक खूनी के बचाव में बेतुकी बहस कर रहा था। उसने वकील को चुप करने के लिए जोर से मेज पर हाथ मारा, तभी उसका स्वप्न टूट गया। जागने पर उसे देश का भार उठाने की बात याद आई।

"ओहो, कितनी आसानी से उड़ रहा था मैं। मुझ में इतनी शक्ति कैसे आई?" वह सोचने लगा।

उधर ललिता ने भी कई अच्छे सपने देखे। एक जगह गाँव के लोग उसे पुलिस इंसपेक्टर के वेश में देख डरने लगे, तो वह प्रेमपूर्वक उन्हें समझाने लगी, "तुम डरते क्यों हो? हम तो तुम्हारी रक्षा के लिए आये हैं। हम तुम्हारे सेवक हैं।" और गाँव के लोग प्रसन्न होकर उसके काम में सहायता देने लगे।

जब वे सुबह उठे, तो उनके सामने सचमुच नया सवेरा था। श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "कल का सवेरा एक 'नया सवेरा' होगा।" सचमुच आज हवा, पेड़, पत्ते सब नये थे। सूर्य की किरणों में इतना सुनहलापन उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था। पंछियों के राग में एक नई ही लय थी। मनोहर और ललिता नये उत्साह से अपना नया कार्यक्रम शुरू करने वाले थे। दस बजे उनके स्कूल में बालकों की सभा होने वाली थी, जिसमें जस्टिस दिवाकर सभापति का आसन ग्रहण करने वाले थे। किन्तु दस बजने से पहले का समय कम नहीं था। अभी तो सात ही बजे थे। तीन घंटों में बहुत कुछ किया जा सकता था। समय की कद्र सफलता के लिए बहुत जरूरी होती है, इसलिए मनोहर और ललिता ने भी इस समय का सदुपयोग करने की योजना बना डाली। साढ़े सात बजे तक

वे नहा-धोकर और नाश्ता करके तैयार हो गये। ललिता ने दुपट्टे को कमर में पेटी की तरह लपेट लिया। फिर उसके साथ बड़े भैया का दिया हुआ पिस्तौल लटका लिया। मनोहर की निकर की पेटी जनेऊ की तरह कस ली, और पुलिस इन्सपेक्टर बन गई। मनोहर को सफेद, लम्बा कोट और गोल टोपी, जो उसने सपने में पहनी थी, नहीं मिल सकी। पर वह भी खुले कालर का कोट और टाई तथा पेंट डाट कर तैयार हो गया।

काम शुरू करने से पहले उन्होंने बिट्ठल दादा के यहाँ सन्तरे खाने की योजना बनाई। बिट्ठल दादा पास के बंगले का माली था। वैसे वे रोज ही वहाँ के सन्तरे खाते थे। इसलिए वे चुपके-चुपके बिट्ठल दादा के पास चले गये। पास जाकर ललिता बोली, "बिट्ठल दादा, देखो, मैं पुलिस इन्सपेक्टर बन गई हूँ।"

"और मैं जज बन गया हूँ।" मनोहर बोल उठा।

बिट्ठल दादा प्रसन्नता से खिल उठे, "वाह, वाह! बहुत अच्छे लग रहे हो तुम दोनों! लेकिन बिटिया, तुम मुझे पकड़कर हवालात में मत डाल देना।"

"नहीं दादा," ललिता बोली, "यह कैसे हो सकता है? तुम तो बहुत अच्छे हो दादा, तुम्हें तो मैं कभी नहीं पकड़ूँगी।"

बिट्ठल दादा ने ललिता की चोटी पकड़कर कहा, "और अगर तुमने सन्तरों की चोरी की, तो तुम्हें कौन पकड़ेगा?"

"अगर कभी गलती से मैं चोरी कर लूँगी, तो खुद अपने हाथों में हथकड़ी डालकर जज के सामने चली जाऊँगी।" ललिता के इस वाक्य को सुनकर बिट्ठल दादा लोट-पोट हो गये।

"अच्छा, दादा, एक बात सुनो।" ललिता कहने लगी, "आज हमारे स्कूल में उत्सव है। तुम आओगे वहाँ ?"

"नहीं बिटिया, मैं काम छोड़कर कैसे जा सकता हूँ ?"

"तब तो दादा, एक मुश्किल पड़ जायगी।" ललिता उदास-सी होकर बोली। मनोहर ने भी निराशा में सिर लटका लिया। दादा ने हैरान होकर पूछा, "कौन-सी मुश्किल ? बताओ तो सही !"

ललिता उसी मुद्रा में बोली, "बात यह है दादा, स्कूल में जस्टिस दिवाकर आने वाले हैं। सब लड़के उन्हें अच्छी-अच्छी चीजें लाकर देंगे। हम क्या देंगे ? अगर हमारे घर में सन्तरे का पेड़ होता तो दो-चार....."

बिट्टुल दादा बीच में ठहाका मार हँस पड़े। "अच्छा, तो यह मुश्किल है। बड़ी चालाक हो तुम। लो, सन्तरे मैं देता हूँ।"

दोनों दो-दो सन्तरे लेकर हँसते-हँसते वापस सड़क पर आ गये।

अचानक उनकी पीठ के पीछे घर्र-घर्र की आवाज हुई। दोनों ने मुड़कर देखा, तो एक कार आ रुकी थी, और उसके पास खड़ा हुआ एक बालक रो रहा था। उसके थाल के चने सड़क पर बिखर गये थे। शीघ्र ही मामला उनकी समझ में आ गया। लड़का चने बेचता था। वह चनों का थाल सिर पर उठाकर सड़क पार कर रहा होगा। कार वाले ने उसे टक्कर लगने से बचाने के लिए ब्रेक लगाई होगी। भय के कारण लड़के के चने बिखर गये होंगे, क्योंकि लड़का स्वयं सही सलामत दिखाई दे रहा था। कार वाला थोड़ी देर रुका, फिर चलने के लिए तैयार हो गया। मनोहर ने ललिता से कुछ कहा,

और ललिता लपककर सड़क पर जा खड़ी हुई। कार वाले को कार फिर रोकनी पड़ी।

"क्या बात है ? तुम क्या चाहती हो ?" कार वाले ने पूछा।

ललिता तमककर बोली, "मैं चाहती हूँ कि तुम कार से बाहर निकल आओ।"

"लेकिन क्यों ?"

अब मनोहर, जो पास ही खड़ा था, बोला, "देखते नहीं, पुलिस इन्सपेक्टर तुम्हारे सामने खड़ा है, तुम अपराधी हो, तुमने इसके चने गिराये हैं, और इसे डराया भी है।" फिर ललिता की तरफ मुड़कर जज वाली शान से कहा, "इन्सपेक्टर, अपराधी को मेरे सामने पेश करो।"

कार वाला पहले तो खीजा, फिर ललिता की वेष-भूषा देख कर मुस्करा पड़ा, और चुपके से बाहर निकल आया।

"अपने हाथ बढ़ाओ।" ललिता ने कठोर स्वर से कहा।

कार वाले ने हाथ आगे कर दिया, और ललिता ने दुपट्टे

से दोनों हाथ बांध दिये। फिर बोली, "अब चलो जज के सामने तुम्हारा फैसला होगा।"

"जज कौन ?" कार वाले ने पूछा

"जज वह खड़ा है। मनोहर उसका नाम है। समझे ? अब चलो।"

"मनोहर जज और इन्सपेक्टर का नाम ?"

"तुम अपराधी हो, हमारे मेहमान नहीं, जो तुम्हें हम अपना नाम बतायें।"

"अगर मैं भाग जाऊँ तो ?" कार वाले ने हँसकर पूछा।

"तो ?" तो यह पिस्तौल किसलिए है ?" कहकर ललिता ने पिस्तौल हाथ में ले लिया। कार वाले महाशय भी मन में प्रसन्न हो रहे थे, अतः वे मनोहर के पास चुपचाप चले आये। चने वाले लड़के को भी बुलाया गया। अब मनोहर अधिक गम्भीर होकर एक पत्थर पर चढ़ कर बैठ गया, और अपराधी से प्रश्न करने लगा।

"तुम पर तेजी से कार चलाने, इस लड़के को डराने और इसके चने गिराने के तीन अभियोग लगाये गये हैं। क्या तुम इन्हें स्वीकार करते हो ?"

अपराधी ने सिर झुकाकर कहा, "मैं अपराधों को स्वीकार करता हूँ। साथ ही क्षमा-याचना करता हूँ, क्योंकि अपराध जान-बूझकर नहीं, अनजाने में हुआ।"

जज साहब बोले, "अपराध अपराध ही है, चाहे वह जान-बूझकर किया गया हो, या अनजाने में। दण्ड तो मिलना ही चाहिए।"

अपराधी ने सिर झुका लिया।

कुछ देर शान्त रहने के बाद जज ने अपना फैसला सुनाया।

"तुमने इस बालक के चने गिराये हैं, उनकी कीमत दस रुपये इसे अदा करो। तुम्हारा दूसरा अपराध इसे भयभीत करने का है, इसका दण्ड यह है कि इसे पाँच रुपये और दो, जिससे यह दूध पीकर स्वस्थ बन सके। और कार तेजी से चलाने के लिए तुम्हें यह सजा दी जाती है कि तुम हमारे साथ पैदल पाठशाला तक चलो, और हमारे यहाँ की बाल-सभा का जलसा देखो।"

"तुम लोग सर्वोदय पाठशाला से" अपराधी ने पूछना चाहा।

ललिता बीच में ही उसे रोककर बोल उठी, "तुम नहीं, आप कहो। तुम अपराधी हो यह मत भूलो!"

"ओह, क्षमा कीजिए!" अपराधी ने विनयपूर्वक कहा, "मेरा मतलब है, यदि आप सर्वोदय पाठशाला की ओर जा रहे हों, तो मेरी कार में आ जाइए। मैं आपको वहाँ पहुँचा दूँगा।"

"नहीं, हम रिश्वत नहीं लेंगे," मनोहर ने कहा। उसके इस वाक्य से कार वाले महाशय और भी प्रभावित हुए। उन्होंने कार में बैठे हुए दूसरे आदमी से इशारे में कुछ कहा, और फिर दोनों बालकों के साथ पैदल चल पड़े।

सर्वोदय स्कूल का पंडाल सजा हुआ था। बच्चों की भीड़ लगी थी। दरवाजे पर हैडमास्टर फूलों का हार लिये खड़े थे। जब तीनों दरवाजे के निकट पहुँचे, तो मनोहर और ललिता के आश्चर्य की सीमा न रही। उन्होंने देखा कि हैडमास्टर साहब ने अपराधी के गले में फूलों की माला डाल दी। अब

वे समझ गये कि अपराधी असल में और कोई नहीं जस्टिस दिवाकर ही हैं। दोनों एक दूसरे की ओर कुछ भय से देखने लगे, फिर दोनों भाग खड़े हुए, किन्तु अभी दो-चार कदम ही भागे थे कि जस्टिस दिवाकर ने उन्हें पकड़ लिया। हैडमास्टर भी दिवाकरजी के व्यवहार से चकित थे। बाद में उन्होंने हैडमास्टर को सारी घटना कह सुनाई, और साथ ही यह भी कहा, "मैं इन बच्चों का भविष्य उज्ज्वल देख रहा हूँ। सच-मुच इस प्रकार के बच्चे भारत में नया सवेरा लायेंगे।" सारी कहानी सुनकर हैडमास्टर ने उन दोनों बच्चों की पीठ ठोकी। उस दिन से मनोहर और ललिता सब विद्यार्थियों के लिए आदर्श बन गये।

अभ्यास

१. श्री जवाहरलाल नेहरू ने रेडियो पर बच्चों को क्या कहा ?
२. मनोहर ने रात को जो सपना देखा, उसका क्या अभिप्राय है ?
३. ललिता कार को रोक कर क्यों खड़ी हो गई ?
४. जज मनोहर ने अपराधी को क्या सजा दी ?
५. 'इस प्रकार के बच्चे भारत में नया सवेरा लायेंगे।' इसका आशय स्पष्ट करो।

व्याकरण

१. नीचे लिखे शब्द कौन से अधिकारी है ?
   (क) और, क्योंकि, इसलिए, कि, लेकिन, परन्तु।
   (ख) अब, आज, कल, तब, कुछ, कितनी, इतनी, कैसे।

२. नीचे लिखे गद्यांश में विराम चिह्न लगाओ :—
   ललिता बोली बात यह है दादा स्कूल में दिवाकर आने वाले हैं सब लड़के उन्हें अच्छी अच्छी चीजें लाकर देंगे हम क्या देंगे अगर हमारे घर में संतरे का पेड़ होता तो दो चार संतरे ही ले जाते

रचना

१. निम्नलिखित को वाक्यों में प्रयोग करो :—
राष्ट्र-निर्माता, वैज्ञानिक, स्थापना, हवालात, क्षमा-याचना
विनयपूर्वक ।

: २३ :

हल्दी घाटी का युद्ध

धड़ कहीं पड़ा सिर कहीं पड़ा,
कुछ भी उनकी पहचान नहीं।
शोणित का ऐसा वेग बढ़ा,
मुरदे बह गये निशान नहीं॥

मेवाड़ - केशरी देख रहा,
केवल रण का न तमाशा था।
वह दौड़-दौड़ करता था रण,
वह मान-रक्त का प्यासा था॥

रण-बीच चौकड़ी भर-भर कर,
चेतक बन गया निराला था।
राणा प्रताप के घोड़े से,
पड़ गया हवा को पाला था॥

जो तनिक हवा से बाग हिली,
लेकर सवार उड़ जाता था।
राणा की पुतली फिरी नहीं,
तब तक चेतक मुड़ जाता था॥

सेना-नायक राणा के भी,
रण देख-देख कर चाह भरे।
मेवाड़ सिपाही लड़ते थे,
दूने तिगुने उत्साह भरे॥

जो साहस कर बढ़ता उसको,
केवल कटाक्ष से टोक दिया।

जो वीर बना नभ-बीच फेंक,
बरछे पर उसको रोक दिया ।।

ऐसे रण राणा करता था,
पर उसको था सन्तोष नहीं ।
क्षण-क्षण आगे बढ़ता था वह,
पर कम होता था रोष नहीं ।।

कहता था लड़ता मान कहाँ,
मैं कर लूँ रक्त-स्नान जहाँ ?
जिस पर नव विजय हमारी है,
वह मुगलों का अभिमान कहाँ ?

तब तक प्रताप ने देख लिया,
लड़ रहा मान था हाथी पर ।
अकबर का चंचल साभिमान,
उड़ता निशान था हाथी पर ।।

वह विजय-मंत्र था पढ़ा रहा,
अपने दल को था बढ़ा रहा ।
वह भीषण समर-भवानी को,
पग-पग पर बलि था चढ़ा रहा ।।

फिर रक्त देह का उबल उठा,
जल उठा क्रोध की ज्वाला से ।
घोड़े से कहा—बढ़ो आगे,
चढ़ चलो, कहा निज भाला से ।।

रणचंडी राणा ने देर न की,
घोड़ा बढ़ आया हाथी पर ।
बैरी-दल का सिर काट-काट,
राणा चढ़ आया हाथी पर ।।

क्षण भर छल-बल कर लड़ा अड़ा,
दो पैरों पर हो गया खड़ा।
फिर अगले दोनों पैरों को,
हाथी-मस्तक पर दिया गड़ा॥

यह देख मान ने भाला से,
करने की क्षण में चाह समर।
इस तरह थाम कर झटक दिया,
हाथी की ही झुक गई कमर॥

राणा के भीषण झटके से,
हाथी का मस्तक फूट गया।
अंबर-कलंक उस कायर का,
भाला भी दब कर टूट गया॥

राणा बैरी से बोल उठा—
'देखा न समर भाला से कर!
लड़ना तुझको है अगर अभी,
तो फिर लड़ ले भाला लेकर॥'

'हाँ-हाँ, लड़ना है', कह कर जब,
बैरी ने उठा लिया भाला।
क्षण भौंह चढ़ा कर देख दिया,
काँपै जो हाथ गिरा भाला॥

राणा ने हँस कर कहा, "मान,
अब बस कर दे, हो गया युद्ध।
बैरी पर वार न करने से,
मेरा भाला हो रहा क्रुद्ध॥"

"अपने शरीर की रक्षा कर,
भग जा, भग जा, अब जान बचा।"

यह कहकर भाला उठा लिया,
भीषणतम हाहाकार मचा ।।
छिप गया मान हौदे-तल में,
टक्कर कर हौदा टूट गया ।
भाला की हल्की हवा लगी,
पिलवान गिरा, तन छूट गया ।।
अब बिना महावत के हाथी,
चिग्घाड़ भगा राणा-भय से ।
संयोग रहा बच गया मान,
खुश भाला, राणा-हय से ।।
सागर-तरंग की तरह इधर,
वैरी राणा पर टूट पड़े ।
तलवार गिरी शत एक साथ,
शत बरछे उन पर छूट पड़े ।।
राणा के चारों ओर मुगल,
होकर करने आघात लगे ।
खा-खा कर अरि तलवार चोट,
क्षण-क्षण होने भू-पात लगे ।।
तब तक भाला ने देख लिया,
राणा प्रताप हैं संकट में ।
बोला न बाल बाँका होगा,
जब तक हैं प्राण बचे घट में ।।
अपनी तलवार दुधारी ले,
भूखे नाहर-सा टूट पड़ा ।
कलकल मच गया, अचानक दल
आश्विन के घन-सा फूट पड़ा ।।

राणा की जय, राणा की जय,
वह आगे बढ़ता चला गया।
राणा प्रताप की जय करता,
राणा तक चढ़ता चला गया॥

रख लिया छत्र अपने सिर पर,
राणा प्रताप-मस्तक से ले।
ले स्वर्ण पताका झुक पड़ा,
रण-भीम-कला अंतक से ले॥

झाला को राणा जान मुगल,
फिर टूट पड़े वे झाला पर।
मिट गया वीर जैसे मिटता,
परवाना दीपक-ज्वाला पर॥

अभ्यास

१. मेवाड़-केशरी, राणा आदि विशेषण किसके लिए प्रयुक्त हुए हैं ?
२. महाराणा प्रताप के घोड़े का क्या नाम था और उसने युद्ध में प्रताप की सहायता किस प्रकार की ?
३. प्रताप और मानसिंह के युद्ध का वर्णन करो ?
४. झाला ने शत्रुओं में घिरे महाराणा की रक्षा कैसे की ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे शब्दों का विग्रह सहित समास-भेद बतलाओ :—
मेवाड़-केशरी, मान-रक्त, रण-बीच, सेना-नायक, नभ-बीच, रक्त-स्नान, दीपक-ज्वाला, विजय-मंत्र, सागर-तरंग।
२. इस पाठ में प्रयुक्त उर्दू शब्दों की सूची बनाओ।

रचना

१. तमाशा देखना, रक्त का प्यासा होना, चौकड़ी भरना, पाला पड़ना, उड़ जाना, टूट पड़ना, बाल बाँका न होना—इन मुहावरों का भावार्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो।

२. निम्नलिखित के अर्थ करो और पर्यायवाची बताओ :—
कटाक्ष, शोणित, साभिमान, रोष, आघात, संयोग ।

निर्देश

पुस्तकालय से लेकर महाराणा प्रताप की जीवनी पढ़ो और उसमें हल्दी घाटी के युद्ध को विशेष रूप से याद करो ।

: २४ :

जापान का सामाजिक जीवन

किसी भी व्यक्ति के परिचय के लिए उसके साथ दीर्घ-कालीन सहवास आवश्यक है और किसी भी देश के परिचय के लिए वहाँ दीर्घकालीन निवास।

जापान में अपना न दीर्घकालीन निवास ही रहा और न कुछ कहने-सुनने लायक सामाजिक जीवन ही। तो भी दो-चार बातें सुनिए।

जापान में बच्चे का नामकरण उसके पैदा होने के सातवें दिन किया जाता है। जापानियों की धारणा है कि जैसा नाम वैसा भविष्य, इसलिए आजकल विशेषज्ञ लोग बच्चों के नाम खूब अच्छे-अच्छे और खूब चुन-चुनकर रखते हैं। कभी-कभी तो वे इतने दुरूह हो जाते हैं कि उनका उच्चारण और लेखन स्वयं बच्चों के लिए मुसीबत हो जाता है।

घर में बच्चा न हो तो 'गोद' ले लिया जाता है। कभी-कभी घर में बच्चा रहने पर भी बच्चा गोद लिया जाता है। पिता चाहता है कि उसकी बिटिया घर में ही रहे। वह किसी बच्चे को गोद लेकर उसी से उसकी शादी कर देता है।

जीवन की परिभाषा

आजकल लोग कुर्सी और मेज को सामाजिक पूर्ति मानते हैं। जापान में सामाजिक जीवन की देवी है ततभी अर्थात् चटाई। ततभी का जापानियों के घरेलू जीवन पर बड़ा ही प्रभाव है—उनके उठने-बैठने से लेकर उनके घर की सजावट

तक। लोग ततभी पर बैठते हैं तो हिन्दुओं की तरह पालथी मारकर नहीं, बल्कि कुछ-कुछ वैसे ही जैसे मुसलमान भाई नमाज पढ़ते समय। नई ततभी बड़ी मनोरम, सुन्दर और भीनी-भीनी खुशबू देती है।

जापान में बच्चे के जन्म के एक सौ बीस दिन बाद उसके मुंह में कुछ खाद्य डाला जाता है। इसे आप जापानी बच्चों का अन्नप्राशन संस्कार कह सकते हैं। जापानियों का विश्वास है कि इस संस्कार के प्रभाव से बच्चा स्वस्थ रहेगा, मोटा-ताजा रहेगा और उसे कभी भी भोजन का अभाव न होगा।

जापानी बच्चे जब स्कूल जाने लगते हैं तब चिल्ला-चिल्ला कर कहते हैं—'इत्तेयैरिमसू' अर्थात् मैं जा रहा हूँ। वापस लौटने पर 'तैदम्मा पैयि' अर्थात् अभी आया है।

बच्चों की बात चल रही है, लगे हाथ उनके सबसे बड़े आकर्षण की बात भी कह दूँ। वह है कमिशीबाई। कमिशी-

बाई किसी स्त्री का नाम नहीं है। कमिशीबाई आया नहीं कि बच्चे अपने-अपने घरों से निकल कर चौरस्ते पर इकट्ठे हुए। कमिशीबाई अपनी साइकिल पर एक लकड़ी का चौखटा लगा लेता है। उसके पास एक बक्स भी रहता है जिसमें खट्टी-मीठी मिठाई रहती है। मिठाई खरीदने वाले बच्चे तमाशा देखने के समय प्रथम पंक्ति में खड़े रहने के अधिकारी होते हैं। कमिशीबाई एक के बाद दूसरी तस्वीर उस चौखटे में लगाता जाता है और दूसरी ओर से निकालता जाता है। वह तस्वीरें जो कहानी कहती हैं, वही कहानी वह कमिशीबाई भी सुनाता जाता है। इसे बच्चों का चलता-फिरता-बोलता सिनेमा ही समझिए। बच्चों को अंजहद पसन्द। माता-पिता को प्रायः उतना ही नापसन्द। कारण स्पष्ट है। कमिशीबाई के आने पर बच्चे माता-पिता को पैसों के लिए जो हैरान करते हैं।

पुलिस तक इन कमिशीबाइयों पर नजर रखती है, न जाने कैसी क्या कहानी सुना जायें। अद्‌भुत प्रचारक होते हैं ये। मिठाई और शिक्षण साथ-साथ!

प्रत्येक जापानी के घर में देव-स्थान जैसा एक स्थान रहता है जो धार्मिक न होने पर भी आइत होता है। अतिथियों में प्रधान अतिथि को सदैव इसी आइत स्थान के ठीक सामने उसी की ओर पीठ करके बैठना होता है।

दो आदमी खड़े हों तो जो दर्जे में नीचा हो, उसे बायीं ओर खड़ा होना होता है। जापान में दायीं ओर ही सम्मान का स्थान है। जब पुरुष और स्त्री साथ-साथ बैठते हैं तो स्त्री को सदैव पति के बायीं ओर बैठना होता है। घर के मालिक को आदर का पहला स्थान मिलना ही चाहिए।

उठने-बैठने की यह व्यवस्था पर्याप्त प्राचीन है। राजा हमेशा दक्षिण की ओर मुंह करके बैठता है, क्योंकि दक्षिण दिशा सम्माननीय है।

बहुत से देशों और वहाँ के लोगों के बारे में कहा जाता है कि जैसा देश वैसे लोग। लेकिन यह कहावत जापानियों पर सब से ज्यादा घटित होती है। लगता है कि वे अपने देश के लिए ही बने हैं और उनका देश भी ठीक उन्हीं के लिए। जापान में एक फ्यूजी पर्वत को छोड़ शायद सभी चीजें छोटे आकार की हैं। स्वयं जापानी तो हैं ही।

विदेशी यात्री को जापान में जो चीज सबसे पहले खटकती है, वह है जापानियों की रुचि। रेल में सोने की जगह इतनी छोटी कि कोई जरा भी लम्बा आदमी पैर फैलाकर न सो सके। हाथ-मुंह धोने के बरतन इतने नीचे कि हर किसी को दुहरा होना ही पड़े।

जापानी घरों में मेज-कुर्सी तो होते ही नहीं। खाने की चौकी चार इंच ऊँची। आइत स्थान में रखा हुआ बौना पेड़ नीचे से ऊपर तक ज्यादा से ज्यादा अठारह इंच ऊँचा।

घर में जिस पिछवाड़े को हम निकम्मा समझकर छोड़ देंगे, उसी छोटी-सी जगह में जापानी एक छोटा-सा बाग लगा लेंगे जिसमें तालाब होंगे, नदियाँ होंगी, पुल होंगे, लैम्प लगे होंगे और बौने पेड़ों का एक जंगल होगा।

आदमी को लगने लगता है कि प्रसिद्ध अंग्रेजी कथा 'गुलिवर्ज वाएज' का गुलिवर लिलिपुत में पहुँच गया।

इस देश में आदमी के लिए जो सबसे अधिक लज्जा की बात है, वह है म्युसक्योनो रह जाना, जिसका मतलब होता है, रजिस्टर्ड न होना। इस तरह का व्यक्ति न किसी स्कूल

में प्रवेश पा सकता है और न उसे कोई नौकरी ही मिल सकती है।

जापान में रजिस्ट्रेशन की पद्धति अत्यन्त विकसित है। सभी जापानियों को शहर, नगर अथवा गाँव के आफिस में रजिस्टर्ड होना ही होता है। जब तक रजिस्ट्री न हो तब तक न किसी के जन्म का कोई कानूनी मूल्य है, न शादी का, न तलाक का, न मृत्यु का, और न स्थान-परिवर्तन का। यदि किसी को अदालत में कोई सजा मिलती है, तो वह भी रजिस्टर में दर्ज होती है।

पहले प्रत्येक सामरी अथवा सामरिक जाति का मुखिया किसी न किसी बौद्ध सम्प्रदाय में रजिस्टर्ड रहता था और प्रत्येक परिवार किसी न किसी बौद्ध मन्दिर में। जो परिवार रजिस्टर्ड रहे हैं, उनके सदस्यों का यह अधिकार रहा है कि मरने पर उन मन्दिरों के पुजारी आकर उनका श्राद्ध कराये और उनके शव को मन्दिर की श्मशान-भूमि में स्थान मिले।

रजिस्टर्ड सदस्यों से भी यह आशा रही है कि वे भी मन्दिर के खर्च में सहायक सिद्ध हों।

किसी के विवाह-संस्कार से तो बौद्ध पुजारियों को प्रायः कुछ लेना-देना नहीं रहा। इधर वे भी मन्दिरों में होने लगे हैं। हाँ, किसी के घर में शोक हो जाय तो मृत व्यक्ति के दाह-संस्कार के समय सूत्रपाठ किया जाता है।

जापान में बौद्धों का, जो जापान की जनसंख्या के ७० प्रतिशत कहे जाते हैं, अग्नि-संस्कार ही होता है। उनकी भस्म का कुछ हिस्सा दाह-क्रिया की जगह पर ही रहता है, लेकिन कुछ हिस्सा मन्दिर में भी लाकर रख दिया जाता है।

जापानियों में आपस में भेंट का बड़ा ही रिवाज है। भेंट लेने-देने के मामले में शायद ही कोई उनका मुकाबला कर सकता है। शादी-विवाह जैसे महत्त्वपूर्ण अवसरों पर तो सभी देशवासी प्रायः एक-दूसरे को भेंट देते ही हैं, परन्तु जापानी तो ऐसे अवसरों पर भी भेंट देते हैं, जैसे नये मकान के बनने पर, नया पता बदलने पर, नई नौकरी लगने पर। कारण से तो नहीं, किन्तु यदि यूँ ही किसी के यहाँ जाना हो तो खाली हाथ जाना न होगा और उसका भी धर्म है कि खाली हाथ न लौटने दे।

अध्यापक, गुरु और वैद्य—इन तीनों पर यह पाबन्दी लागू नहीं है। वे बिना बदले में कुछ भी दिये कोई भी भेंट स्वीकार कर सकते हैं।

कुछ न कुछ भेंट देते रहना जापानियों की प्रकृति का एक अंग बन गया है। अपरिचित लोगों को कभी-कभी काफी मूल्यवान चीजें भेंट में दे दी जाती हैं। दाताओं का आनन्दित होना ही एकमात्र कारण समझ में आता है। जापान जाते समय मेरे अपने पास कुल ६० पौण्ड सामान था। लौटा तो २५० पौण्ड हो गया, जापानी मित्रों की इसी प्रवृत्ति की कृपा से!

जापानियों में एक प्रथा है जो एक दृष्टि से अच्छी भी लगती है। जब कोई परिवार देखता है कि वह कर्जे के भार से इतना ऊब गया है कि अब उसके चुका सकने की कोई आशा नहीं, अथवा परिवार के सदस्य से कोई ऐसी गलती हो गई है जिससे परिवार की इज्जत में स्थायी रूप से बट्टा लग सकता है, तो उस परिवार के सदस्य रातों-रात अपना सब सामान समेटेंगे और किसी को भी बिना कुछ पता दिये किसी अज्ञात

स्थान के लिए निकल पड़ेंगे। यह प्रथा 'योनिगे' कहलाती है, जिसका अर्थ है रात्रि-निष्क्रमण।

निराश प्रेमी-युगलों की आत्म-हत्याएँ अतीत की मनोरम कथाएँ बन गई हैं। अब कोई 'हर-किरि', पेट फाड़कर आत्म-हत्या भी नहीं करता। किसी समय ये दोनों बातें भी जापानी जीवन की विशेषताएँ थीं।

एक खास पारिवारिक और सामाजिक संस्था है जो कदाचित जापान में ही है। यह ठीक-ठीक भारतीय आश्रम-व्यवस्था का वानप्रस्थ आश्रम भी नहीं। कोई भी आदमी स्वेच्छा से परिवार के मुखियापन और समस्त कार्यभार से मुक्त हो जाता है। वह और उसकी भार्या दोनों इंक्यो कहलाते हैं।

जापानियों का सामान्य पेय है चाय, जिसमें न चीनी और न तिब्बतियों की तरह नमक ही। इसके बाद दूसरे नम्बर पर है साके, चावल की सुरा।

एक ओर तो जापानियों की चाय बिना चीनी के होती है और वे विशेष मिठाई-प्रिय भी नहीं होते। तो भी आश्चर्य है कि उनकी काफी सब्जियाँ चीनी में पगी होती हैं। प्याज चीनी में पगा हुआ। यह चीज जापान में ही खाने को मिलेगी।

जापानियों का मानस अनेक सुन्दर सुकोमल कथाओं के झीने-झीने तारों से बुना हुआ है। एक लघु कथा इस प्रकार है।

एक आदमी था, जिसके दो ही काम थे—या तो माँ की सेवा करना या बाग के फूलों की। समय पाकर उसकी माता का देहान्त हो गया। उसका दिल भारी हो गया। वह बाग में घूम रहा था। उसने देखा, बाग के फूलों की पंखड़ियाँ बिखर-

त्रि रूरकरजमीन पर आ रही हैं। वह साधु हो गया······और भी एकाकी। एक रात उसकी कुटी के दरवाजे पर ठक-ठक हुई। दरवाजा खोला। एक स्त्री खड़ी थी। बड़े संकोच और भय के साथ उसने उसे अन्दर आने दिया।

बुढ़िया एक भिक्षुणी थी, सफेद वस्त्र पहने। उसके बाद तरुणियाँ आयीं। एक से एक बढ़कर सुन्दर लिबास पहने।

साधक ने सभी को बौद्ध धर्म का उपदेश दिया। वे प्रभावित हुईं। उनकी आँखें सजल हो आयीं। वे जाने को हुईं।

साधक ने कहा, "अपना परिचय तो देती जाओ।"

"हम उन्हीं फूलों की पंखुड़ियाँ हैं, जिन्हें तुम इतने दिन अपने बाग में प्रेमपूर्वक सींचते रहे।"

मैं जापान में महीना भर रहा। दो-तीन चीजें नहीं देखीं—

रोते हुए बच्चे नहीं देखे, झगड़ती हुई स्त्रियाँ नहीं देखीं, माँस-मछली की दुकानों पर भी मक्खियाँ नहीं देखीं।

अभ्यास

१. जापान को सूर्योदय का देश क्यों कहा जाता है ?
२. जापानियों का प्रमुख धर्म कौन-सा है ?
३. एक दूसरे की सहायता के लिए जापान में क्या प्रथा है ?
४. इस पाठ के आधार पर जापानियों के रहन-सहन पर प्रकाश डालो।
५. 'कमिशीबाई' से तुम क्या समझते हो ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे समस्त पदों का विग्रह सहित समास-भेद बतलाओ :—
कहना-सुनना, दो-चार, उठना-बैठना, माता-पिता, देवस्थान, मेज-कुर्सी, दाह-संस्कार, फल-फूल, कार्य-भार।

३. निम्न में पुष्पांकित शब्दों के सर्वनाम उनके भेद सहित बताओ :—

(क) कोई* आया है।

(ख) वह* बच्चे को गोद में लेती है।

(ग) जो* धार्मिक नहीं होता, वह* कठोर होता है।

(घ) यह* समय बहुत अच्छा है।

(ङ) यह* खालो, मैं* वह खाऊँगा।

रचना

१. इस पाठ के आधार पर जापान के सामाजिक जीवन पर अपनी भाषा में एक लेख लिखो।

२. जापान के सामाजिक जीवन की अपने देश के सामाजिक जीवन से तुलना करो और देखो कि दोनों देशों में किस-किस बात में समानता है ?

: २५ :

ऐन मौके पर

बुद्धि वह, चातुरी वह, प्रतिभा वह, जो ऐन मौके पर राह बताये, पंथ सुझाये, काम चलाये। यों तो बुद्धि उस खास जानवर में भी होती है, जो पीठ पर भारी बोझ लिये, आँख झुकाये, कान लटकाये, लकीर पकड़े, धोबी-घाट तक जैसे-तैसे पहुँच ही जाता है।

मैं मानता हूँ, वैसी बुद्धि, वैसी चातुरी, वैसी प्रतिभा सब को नहीं मिलती। यह भी मानता हूँ, एक लम्बी साधना के बाद ही बुद्धि में वैसा चमत्कार, चातुरी में वैसा पैनापन, और प्रतिभा में वैसे पंख लग पाते हैं जब आदमी एक उड़ान में पहाड़ को पार कर लेता है, एक छलांग में समुद्र लाँघ लेता है, एक सरपट में मरुभूमि को पीछे छोड़ देता है, जबकि दूसरे लोग साँस रोक कर यह देखने को उत्सुक होते हैं कि अब वह मरा-गड़ा या जला-डूबा।

एक ताजा उदाहरण लीजिए। पिछली लड़ाई शुरू हुई। हिटलर ने यूरोप में कुहराम मचा दिया। वह देश पर देश विजय करता गया, ऐसा लगा, सारा संसार तानाशाही के क्रूर पंजे में आकर रहेगा। भारत में अजीब हालत थी; नाजीवाद के सभी दुश्मन थे, किन्तु उसके खिलाफ अंग्रेजों को मदद भी किस तरह दी जा सकती थी, जो हमें गुलाम बना कर रखे हुए थे! हमारे नेताओं की दिमागी परेशानी देखने लायक थी, खासकर उन नेताओं की जिनका दिमाग ज्ञान-विज्ञान से खचाखच भरा हुआ था। उन्हें एक तरफ खाई दीखती थी,

दूसरी तरफ अग्निकुण्ड धधकता नजर आता था। किसी को कुछ नहीं सूझता था, किन्तु सेनापति तो वह, जो अन्धकार में भी प्रकाश ढूंढ निकाले। ऐन मौके पर उसके मुंह से निसृत हुआ—'भारत छोड़ो।' और, यह क्या सच नहीं कि यदि उसके मुंह से यह वाणी न फूटती, तो हम आज भी गुलाम होते ?

इतिहास की वह अगर घटना किसे याद नहीं है ? नेपोलियन की सेना विजयाभियान को निकली है, सामने आल्प्स खड़ा है। सेना की, सेनानायकों की बुद्धि चक्कर में है, अब क्या हो ? "बढ़ो, आल्प्स पार करो।" "यह तो असम्भव है।" "असम्भव शब्द बुजदिलों के कोश में होता है।" और, वह देखिए, वह छोटा-सा घुड़सवार अपने घोड़े को आगे फेंदाता है और लीजिए, आल्प्स पार।

हमें यह घटना तो याद रहती है, किन्तु हम भूल जाते हैं कि सब की जिन्दगी में आल्प्स आता है। हम उस आल्प्स को देखते हैं, सहमते हैं, डरते हैं, हिम्मत हार कर बैठ जाते हैं या उसके पार करने की विस्तृत योजनाओं में लग जाते हैं। प्राय: यही होता है, योजनाएं बनती ही रह जाती हैं, आल्प्स मुस्कराता ही रह जाता है।

वह मस्तिष्क भी धन्य है जो लम्बी-लम्बी योजनाएं बना सकता है। वह पुरुष-पुंगव धन्य है, जो योजनाएँ बनाता है, उन पर चलता है, लोगों को चलाता है। किन्तु ऐसी योजनाओं में भी ऐसी समस्याएँ आती हैं, जिनका हल यदि ऐन मौके पर नहीं निकाला जा सके, तो योजनाएँ ही नहीं खत्म होतीं, अपने बनाने वाले को भी ले डूबती हैं।

लोग प्राय: कहा करते हैं, अरे, अब ग्यारहवें घण्टे में क्या

होगा ? अजी, भोज के वक्त क्या कुम्हड़ा रोप रहे हो ? ऐसे लोगों से मुझे चिढ़ है। वे बेचारे नहीं जानते, यह ग्यारहवाँ घण्टा सब से महत्त्वपूर्ण घण्टा होता है। यदि ग्यारहवें घण्टे में काम करने वाली आपकी बुद्धि नहीं है, तो दस घण्टों का सारा किया-कराया आपका बर्बाद जायगा। दस घण्टे तो सब के घण्टे हैं, प्रतिभाशालियों का घण्टा तो यही ग्यारहवाँ घण्टा है। गधे और घोड़े में फर्क बताने वाला यही घण्टा होता है, "मिडिओकर" और "जीनियस" में भेद करने वाला यही घण्टा होता है। "भोज के वक्त क्या कुम्हड़ा रोप रहे हो ?" जैसे दुनिया में कुम्हड़े रोपे ही नहीं गये—आखिर दूसरे लोगों ने दस घण्टों में क्या किया है ? अकल है, तो वे कुम्हड़े हमारे भोज में ही परोसे जायेंगे।

आदमी की पहचान ऐन मौके पर ही होती है—यों तो सब धान बाईस पसेरी वाली कहावत चरितार्थ होती ही है। यदि आपकी बुद्धि में, प्रतिभा में, जीवन है, प्रवाह है, तो ग्यारहवें घण्टे के संकड़े रास्ते पर जाकर वह और भी तीव्र हो जायगी, अदम्य और अलंघ्य हो जायगी। हिमालय की संकड़ी गली से पतली धारा में निकलने वाली गंगा को ऐरावत भी न रोक सका, और वही जब फैल गई, लम्बी-चौड़ी हुई, तो उसे एक ऋषि ने चुल्लू में उठाकर पी लिया। किन्तु गंगा में कुछ प्रवाह था कि वह अपना रंग और स्वाद बचा सकी; नहीं तो, शान्त-विस्तृत समुद्र को तो पी ही नहीं लिया गया, उसे खारा तक हो जाना पड़ा।

मैं मानता हूँ, यह युग "मिडिओकर" लोगों का है—उनका है, जो पिटे-पिटाये रास्ते पर बड़ी सावधानी से, दामन बचाते हुए चलते हैं और धीरे-धीरे ऊँची से ऊँची जगह पर

पहुँच कर उन पर हँसते हैं जो "जीनियस" हैं, किन्तु मौके के अभाव में जो जहाँ के तहाँ खड़े रह गये या किसी दुर्घटना का शिकार बनकर घायल हो गये या मर-खप भी गये। पर इतिहास बताता है, दुनियाँ की तरक्की के हर मोड़ पर उन्हीं की सूझ-बूझ ने आगे का रास्ता दिखलाया, वे मर-खप भी गये तो क्या हुआ, उन्हीं की हड्डियों को मशाल बनाकर पीछे आने वाली सन्तानों ने अपने गंतव्य पथ का पता लगाया।

मैं मानता हूँ, ऐन मौके की तलाश में आदमी को बैठा नहीं रहना चाहिए, ऐसे मौके सूचना देकर आते भी नहीं। काम का एक सिलसिला होता है, जिसकी किसी कड़ी के साथ यह मौका भी बँधा होता है। जहाँ सिलसिला नहीं, वहाँ मौका भी नहीं। किन्तु यह भी सच है कि यदि काम का सारा सिलसिला रखा जाय, लेकिन ऐन मौके की कड़ी उससे निकाल दी जाय, तो सारा शीराजा बिखर जायगा।

जरा एक उदाहरण को लेकर देखें। फुटबॉल के मैदान में हम चलें। एक तरफ से गेंद चली, खिलाड़ियों का वह सम्मिलित और सिलसिलेवार प्रयत्न है, जो उसे विपक्षी के गोल के निकट तक पहुँचाता है। किन्तु ऐन मौके पर कोई अच्छी 'किक' देने वाला नहीं रहा, तो सारी मेहनत अकारथ जाती है। इस ऐन मौके पर 'किक' देने वाले पर ही 'टीम' का सारा भविष्य निर्भर करता है। हर टीम में बस एक-दो आदमी ही ऐसे होते हैं, किन्तु जहाँ ऐसे आदमियों का अभाव है, वह टीम सदा हारने वाली टीम होगी, भले ही उसके आठ-नौ खिलाड़ी अपनी जगह पर बिलकुल फिट हों, पूरे तगड़े हों।

जो बात खेल के मैदान की है, वही जीवन के हर क्षेत्र की है। खिलाड़ी सब होते हैं, 'स्कोरर' कम। किन्तु ऐसे लोग

भी है जो कहते हैं, अरे 'स्कोर' करना तो एक 'चांस' है। मेहनत किसी ने की, आपने एक हल्की 'किक' लगाकर वाहवाही लूट ली। हल्दी लगी न फिटकरी, रंग चोखा रहा आपका।

वैसे लोग नहीं जानते, इस 'किक' में क्या-क्या होता है? आँखों की नसें और अँगूठे की नसें एक हो रही हैं, मस्तिष्क के संकोचन और हृदय की धड़कन में एक तार बँध गया है, सारी कर्मेन्द्रियाँ चौकस हैं, सजग हैं। आँखों ने जरा धोखा दिया, अँगूठे ने किक देते समय जरा भी लापरवाही की, दिमाग ने सारी परिस्थिति को तुरन्त ही भाँप नहीं लिया और हृदय की धड़कन ने यदि पैरों में थोड़ी भी हिलजुल डाल दी, तो सारा किया-कराया बर्बाद। वह एक क्षण कई सहस्र 'क्षणों' का सार होता है, जिसे आप 'चांस' कहते हैं, वह एक बड़ी साधना का आकस्मिक फलमात्र है। किन्तु, आकस्मिक आप के लिए, स्कोरर के लिए तो वह तपस्या का समुचित वरदान है।

ग्यारहवें घण्टे में काम करना, किसी ऐसे वैसे बूते की बात नहीं है। ग्यारहवें घण्टे की तैयारी एक घण्टे में कर लेना, समय का वह संकोच है जो साधारण लोगों का दम घोंट देता है। ऐन मौके पर काम कर ले जाने के लिए शेर का दिल चाहिए, इस्पात की नसें चाहिए। जरा भी घबराहट हुई, हाथ जरा काँपे, पैर जरा पिछड़े, कि सारा गुड़ गोबर। यह साधना का पथ है—'तलवार की धार पै धावनो है।'

किन्तु, जो इस गुर को जान गये हैं, जिन्होंने इसका रस ले लिया है, उन्हें इसमें मजा भी कम नहीं मालूम होता। देखने वालों के मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही हैं—अरे, अब क्या होगा, अरे, यह कैसे होगा, यह आदमी अब इस आखिरी वक्त

में क्या कर सकेगा, यह गया, वह गया। किन्तु इन सारी हाय-तोबाओं से उदासीन वह आदमी सारी शक्ति को एक जगह केन्द्रित कर चुपचाप काम किये जा रहा है, क्योंकि खोने के लिए उसके पास घण्टे कहाँ, क्षण भी कहाँ। उसकी चेतना सजग है, आँखें सजग हैं, हाथ सजग हैं, सभी इन्द्रियाँ सजग सेवक की तरह अपने-अपने क्षेत्रों में डटी हैं, और लीजिए, ऐन मौके पर कमाल होकर ही रहा। आदमी के कर्तृत्व की, नेतृत्व की, मैं कहूँ, कवित्व की, असली जाँच, असली पहचान, ऐन मौके पर ही होती है।

अभी इस पिछले युद्ध की बात है। अलेक्जेण्डर की सेना मिस्र में युद्ध कर रही थी। नाजी-वाहिनी उसका पीछा कर रही थी। एक दिन ऐसा आया कि गोले-बारूद तक नहीं रह गये। अब क्या हो? आत्मसमर्पण? एक सैनिक के लिए आत्मसमर्पण क्या चीज है, कौन नहीं जानता? तो भी आत्म-समर्पण भी तो होते ही रहते हैं। किन्तु ऐसे मौके पर ही तो आदमी की पहचान होती है, उसके असली घात की पहचान। अलेक्जेण्डर के दिमाग में ऐन मौके पर आत्मसमर्पण के बदले एक नई सूझ सूझी। उसने कहा—तोपों में बारूद की जगह बालू भरकर चलाते जाओ। तोपें बालू उगल रही हैं—धड़ाम-धड़ाम, धूल ही धूल। और उसी की ओट में उसकी सेना पीछे इस तरह हट गई कि जब नाजी-वाहिनी वहाँ पहुँची तो सिवा कुछ खाली तोपों के उसके हाथ कुछ नहीं लगा।

राजनीति में, साहित्य में, कला में, हर क्षेत्र में ऐसे उदाहरण हैं। ऐन मौके की सूझ-बूझ ने ही उनमें रस दिया है, सौन्दर्य दिया है, सफलता दी है। आप कोई उपन्यास लिख रहे हों, कोई नाटक रच रहे हों, कोई कविता बना रहे हों,

कोई तस्वीर गढ़ रहे हों—देखिएगा, उसके बनाने के सिलसिले में कोई ऐसा भी मौका अवश्य आया होगा जब स्वयं उलझन का अनुभव किया होगा—अब कहानी को कौन-सा मोड़ दें, नाटक में कौन-सी नई अवतारणा लावें, कविता की आगे की कड़ी क्या हो और तस्वीर के अमुक भाग में रंगों का मेल कैसा दें ? यदि उस ऐन मौके पर बुद्धि ने आपका साथ न दिया होता, तो फिर आप कहाँ रहते, आपकी कृति का क्या हश्र होता ? कल्पना कीजिए ।

इसलिए मैं अपनी बात को फिर दुहराता हूँ—बुद्धि वह, चातुरी वह, प्रतिभा वह जो ऐन मौके पर राह बताये, पथ सुझाये, काम चलाये । मैं मानता हूँ, ऐसी बुद्धि, ऐसी चातुरी, ऐसी प्रतिभा एक लम्बी साधना के बाद आती है । तो साधना की धूनी भी रमती रहे, किन्तु हम उसकी परिणति को न भूलें, यही मेरा अन्तिम निवेदन है ।

अभ्यास

१. 'भारत छोड़ो' यह हमारे किस नेता ने और कब कहा था ?
२. 'सब की जिन्दगी में आलस्य आता है ।' इसका क्या अभिप्राय है ?
३. 'असम्भव शब्द बुजदिलों के कोश में होता है ।' इसका अर्थ स्पष्ट करो ।

व्याकरण

१. 'बुद्धि वह जो ऐन मौके पर काम आये'— इस वाक्य की पद-व्याख्या करो ।
२. तुलना की दृष्टि से विशेषण के कितने और कौन-कौन से भेद हैं ?
३. कर्तृत्व, नेतृत्व, कवित्व—व्याकरण के अनुसार ये कैसे शब्द हैं ?

रचना

१. ग्यारहवाँ घण्टा, भोज के वक्त कुम्हड़ा रोपना, सब धान बाईस पसेरी—इन मुहावरों के भावार्थ बतलाओ ।

२. इनको वाक्यों में प्रयोग करो और पर्यायवाची बतलाओ :—
प्रतिभाशाली, मरुभूमि, निमृत, पुरुष-पुंगव, अदम्य, अलंघ्य, गन्तव्य ।

३. इस पाठ के आशय को अपनी भाषा में लिखो ।

: २६ :

कौन भला ?

(१)

कौन भला, जो पर सेवा में—
तन, धन प्राण लगाता है ?
अथवा अपनी ही चिन्ता में—
जिसका जीवन जाता है ?

(२)

कौन भला, जो जन्म-भूमि की—
वेदी, पर बलिदान हुआ ?
अथवा, जो धन-धान्य कमाकर—
अरबों का धनवान हुआ ?

(३)

कौन भला, जो एका करके—
प्रकटाता निज शक्ति असीम ?
अथवा वह जो वैर बढ़ा कर—
रटता रहता राम-रहीम ?

(४)

कौन भला, जैसे-तैसे जो—
करके काम दिखाता है ?
अथवा वह जो धर्म-कर्म की—
बातें बहुत बनाता है ?

(५)

कौन भला, जो विद्या-बल से—
करता आविष्कार नया ?
थोथे पोथे रटते रटते—
अथवा जिसका जन्म गया ?

(६)

कौन भला, जो देश-जाति को—
निज सर्वस दे जाता है ?
अथवा वह, जो काट-कपट कर—
ऊँचे महल चिनाता है ?

अभ्यास

१. दूसरों की सेवा और अपनी ही चिन्ता करने वालों में क्या अन्तर है ?
२. इस कविता में किन-किन की तुलना की गई है और आप उनमें से किस-किस को ठीक समझते हैं ?

व्याकरण

१. 'प्रकटाना' नाम धातु है। ऐसी पाँच नाम धातु लिखो।
२. 'सर्वस' तद्भव शब्द है। ऐसे पाँच तद्भव शब्द लिखो।
३. नीचे लिखे पदों को समस्त करो :—
जन्म की भूमि, धन और धान्य, धर्म और कर्म, विद्या रूपी बल, देश और जाति।

: २७ :

संयुक्त राष्ट्र-संघ

पिछले दो महायुद्धों में कितने मनुष्यों की हत्या हुई और कितनी सम्पत्ति का नाश हुआ, उसका विचार कर सभी के मन में यह लालसा होती है कि संसार के सब देशों को मिलकर कोई ऐसी योजना बनानी चाहिए कि जिससे भविष्य में यह दानवीय कार्य न हो सके। प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर एक अन्तर्राष्ट्रीय संघ का संगठन किया गया था, जिसका नाम लीग ऑफ नेशन्स था, पर उसे सफलता न मिली। शक्तिशाली राष्ट्रों ने उसका अनुशासन न माना और दुर्बलों पर मनमाने अत्याचार किये। जो राष्ट्र उसके सदस्य बने थे और जिन्होंने विश्व में शान्ति रखने का बीड़ा उठाया था, वे भी स्वार्थवश अपने कर्त्तव्य से उदासीन रहे। इस प्रकार उसका प्रभाव नहीं के बराबर हो गया और जर्मनी जैसे युद्ध-प्रिय राष्ट्र फिर से अपनी सैनिक-शक्ति के संवर्द्धन में व्यस्त हो गये। इसके परिणामस्वरूप द्वितीय महायुद्ध में संसार को ग्रस्त होना पड़ा। इसका कु-प्रभाव सभी देशों पर पड़ा, सभी को धन-जन की अपार हानि उठानी पड़ी। द्वितीय युद्ध के समाप्त होने से पहले ही युद्ध-संचालन के कई प्रश्नों पर विचार तथा निर्णय करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र-संघ का जन्म हुआ। यह भी निश्चय हुआ कि युद्ध बन्द होने पर यही संस्था राष्ट्रों के पारस्परिक झगड़ों का शान्तिपूर्वक निपटारा करे। इस महत्त्वपूर्ण संस्था के आयोजन में ब्रिटेन, रूस, चीन तथा अमेरिका ने भाग लिया और ७ अक्टूबर सन् १९४४ ई०

को उसके विधान की रूप-रेखा की स्वीकृति हुई। बाद में सेनफ्रांसिस्को में २५ अप्रैल १९४५ से २६ जून १९४५ तक इस पर सब राष्ट्रों ने विचार किया और उसे स्वीकार कर लिया। इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र-संघ संघटित हुआ। इसी को यू० एन० ओ० कहते हैं।

इसके मुख्य उद्देश्य ये हैं—(१) मिल कर सब राष्ट्रों को सामूहिक प्रयत्नों द्वारा विश्व में शान्ति स्थापित करना, (२) सदस्य राष्ट्रों की सार्वभौमिक समानता को मानना, (३) भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के पारस्परिक झगड़ों को निबटाना तथा उनमें मेल कराना, (४) शान्ति संस्थापन के उपाय निश्चित करना, (५) शान्ति भंग करने वाले राष्ट्रों के विरुद्ध राजनीतिक, आर्थिक तथा आवश्यक हो तो सैनिक कार्यवाही करना, (६) किसी दूसरे राष्ट्र की स्वतन्त्रता तथा भौगोलिक एकता पर कोआक्रमण न करना।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र-संघ के अन्तर्गत कई सभाएँ तथा समितियाँ भी बनाई गई हैं, जिनमें मुख्य-मुख्य ये हैं—

(१) **साधारण सभा या जनरल असेम्बली**, जिसके सदस्य राष्ट्र-संघ के सभी सदस्य होते हैं। इसका काम सुरक्षा-परिषद का ध्यान ऐसे मामलों की ओर दिलाना है जिनसे शान्ति भंग होने की आशंका है। इसे अपनी ओर से कोई सिफारिश करने का अधिकार नहीं है। यह अन्तर्राष्ट्रीय कानून तथा राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति के लिए अनुसंधान-कार्य करा सकती है। साधारणतया वर्ष में एक बार इसका अधिवेशन होता है जिसमें नये सदस्यों के प्रवेश तथा आय-व्यय

के चिट्ठे पर विचार किया जाता है। नियमानुसार विशेष अधिवेशन भी बुलाये जा सकते हैं।

(२) **सुरक्षा-परिषद**—इसे संयुक्त राष्ट्र-संघ की कार्य-कारिणी समिति समझना चाहिए। इसके ग्यारह सदस्य हैं, जिनमें रूस, अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, राष्ट्रीय चीन तो स्थायी हैं, शेष छः अस्थायी हैं। सुरक्षा-परिषद का मुख्य कार्य युद्धों को रोकना है। इस हेतु शस्त्रीकरण पर भी नियन्त्रण रखना आवश्यक है। सब सदस्य सुरक्षा-परिषद के निर्णय मानने के लिए बाध्य हैं। परिषद के अधिवेशन यथासमय होते रहते हैं। जहाँ शान्ति भंग होने की आशंका हो, वहाँ परिषद स्वयं छानबीन कर सकती है और अस्थायी रूप से प्रबन्ध भी कर सकती है। सुरक्षा-परिषद में साधारणतः किसी बात पर निर्णय करने के लिए कम से कम सात मतों की आवश्यकता है, विशेषतः किसी महत्त्वपूर्ण विषय का निर्णय करना हो तो सात मतों में पाँच स्थायी सदस्यों के वोट होना आवश्यक है।

(३) **आर्थिक तथा सामाजिक परिषद**—इसके सदस्यों की संख्या अठारह है जिनको तीन वर्ष के लिए साधारण सभा चुनती है। इस परिषद का कार्य-क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। उसका काम संसार के सब आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक इत्यादि विषयों का अध्ययन करना तथा तत्सम्बन्धी रिपोर्ट साधारण सभा में पेश करना है। यह कार्य इस उद्देश्य से किया जाता है कि लोगों के आर्थिक, सामाजिक, शिक्षा तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी स्तर को ऊँचा उठाया जाय और अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक सहयोग बढ़े। इस परिषद को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के आयोजन का अधिकार भी है।

(४) **ट्रस्टीशिप-परिषद**—यह इसलिए है कि उन प्रदेशों के शासन पर नियंत्रण रखा जा सके जिनको ट्रस्टों को सौंपा हुआ है। इसका उद्देश्य पिछड़े हुए देशों को इस योग्य बनाना है कि वे अपना शासन स्वयं कर सकें।

(५) **अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय**—इसमें पन्द्रह न्यायाधीश होते हैं जिन्हें साधारण-सभा चुनती है। इसका काम राष्ट्रों के झगड़ों का कानूनी निपटारा करना है। संयुक्त राष्ट्र-संघ के अन्तर्गत कोई समिति या संस्था अपने कार्य-क्षेत्र के विषय में इस न्यायालय से परामर्श कर सकती है।

संघ के कार्यालय का प्रधान सेक्रेटरी-जनरल होता है। सुरक्षा-परिषद की सिफारिश पर साधारण सभा इसकी नियुक्ति करती है। यह संयुक्त राष्ट्र-संघ के कार्यों का वार्षिक विवरण साधारण सभा में उपस्थित करता है। यह और इसके अन्य सहकारी अफसर अन्तर्राष्ट्रीय कर्मचारी होते हैं जिनका उत्तरदायित्व केवल संघ के ही प्रति होता है।

यदि संकीर्ण स्वार्थ की भावना का त्याग कर सब राष्ट्र सत्य-निष्ठा से संघ के उद्देश्यों की पूर्ति में लग जायें तो संसार का बड़ा कल्याण हो सकता है।

अभ्यास

१. 'संयुक्त राष्ट्र-संघ' बनाने की आवश्यकता क्यों पड़ी ?
२. संयुक्त राष्ट्र-संघ की स्थापना कब हुई और इसका उद्देश्य क्या है ?
३. संयुक्त राष्ट्र-संघ के संगठन और कार्यविधि की क्या रूप-रेखा है ?
४. राष्ट्र-संघ का कार्य ठीक ढंग से चलता रहे, इसके लिए किस बात की आवश्यता है ?

व्याकरण

१. निम्नलिखित पदों को समस्त करो और इस पाठ में उन्हें ढूँढ़ो :—
राष्ट्रों का संघ, महत्त्व से पूर्ण, नियम के अनुसार, समय के अनुसार, कार्य के लिए क्षेत्र, सत्य में निष्ठा।

रचना

१. अर्थ बतलाकर वाक्यों में प्रयोग करो :—
लालसा, अनुशासन, संवर्द्धन, कु-प्रभाव, अधिवेशन।

२. निम्नलिखित शब्दों के विपरीतार्थक शब्द बतलाओ :—
सुरक्षा, शस्त्रीकरण, सहयोग, सत्य।

निर्देश

पुस्तकालय से संयुक्त राष्ट्र-संघ सम्बन्धी कोई पुस्तक लेकर पढ़ो।

: २८ :

आलस्य और दृढ़ता

युवा पुरुषों के लिए इससे अच्छा कोई दूसरा उपदेश नहीं है कि 'कभी आलस्य न करो'। यह ऐसा उपदेश है कि जिसके लिए इस बात का ध्यान बालपन से ही रखना चाहिए कि समय व्यर्थ न जाय। यह तभी हो सकता है जब सारे काम नियम से और उचित समय पर किये जायँ। जो युवा पुरुष नित्य किसी काम में कुछ समय लगाता है वह कभी चूक नहीं सकता। रहा इस बात का निर्णय करना कि किस काम में कितना समय लगाना चाहिए, सो यह उस कार्य पर और उसके करने वाले पर निर्भर है। आवश्यकता केवल इतनी है कि चाहे कितना ही थोड़ा समय किसी कार्य में क्यों न दिया जाय, पर वह बराबर वैसा ही हुआ करे, उसमें किसी प्रकार की बाधा नहीं पड़नी चाहिए।

मान लिया जाय कि प्रतिदिन एक काम के लिए एक घण्टे का समय लगाया जा सकता है। अब पहले-पहल तो यह बहुत थोड़ा जान पड़ेगा, परन्तु वर्ष के अन्त में इसका फल अधिक दीख पड़ेगा। जैसे एक छोटा-सा बीज देखने में कितनी छोटी वस्तु है, पर उसे बो देने से और समय पर पानी देते रहने से वह एक बड़ा-सा पेड़ हो जाता है और उसमें फल-फूल लग जाते हैं। एक उपाय को मन में स्थिर करके उसी के अनुसार प्रतिदिन नियम के साथ काम करने ही से वह काम पूरा हो सकता है।

किसी काम के करने में एक साथ ही शीघ्रता करने लगना,

और फिर उसे छोड़कर दूसरे काम में लग जाना ऐसा ही व्यर्थ और निष्फल है जैसा आलस्य करना। एक आलसी मनुष्य उस घर वाले के समान है, जो अपना घर चोरों के लिए खुला छोड़ देता है। वह पुरुष बड़ा ही भाग्यवान है, जो यों कहता है, "मुझे व्यर्थ के कामों के लिए फुरसत नहीं है, क्योंकि मैं बिना किसी आवश्यक काम के समय को नष्ट नहीं करता। प्रयोजन बिना मुझे कोरी बकवक अच्छी नहीं लगती। काम में लगे रहने से मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है और जब मैं अपना काम पूरा कर लेता हूँ, तो जानता हूँ कि किस रीति से एक काम के अनन्तर विश्राम करके दूसरे काम में लग जाना होता है।" ऐसे ही मनुष्य उन्नति कर सकते हैं।

आलस्य को दूर करने का बहुत ही सरल उपाय यह है कि यह बात भलीभाँति समझ ली जाय कि बिना हाथ-पैर हिलाये संसार का कोई काम नहीं हो सकता। संसार के विषय में लोग जो चाहे कहें, परन्तु यह स्थान समय को नष्ट करने का नहीं है। ऐसे स्थान में जहाँ पर सब लोग अपने-अपने काम-काज में लगे हुए हैं, आलस्य करने से केवल नाश ही होगा, लाभ कभी नहीं हो सकता।

किसी विद्वान का कथन है, "जीवन थोड़ा है, गुण अनन्त हैं; अवसर हाथ से निकल जाते हैं, परन्तु पूर्ण रीति से नहीं हो सकती और वस्तुओं के विषय में बुद्धि स्थिर नहीं है।" बस, प्रत्येक मनुष्य को इन उपदेशों पर ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से वह सदा सचेत बना रहेगा और अपने अमूल्य समय को आलस्य से नष्ट न करेगा।

किसी काम में दृढ़ता के साथ लगे रहने से मनुष्य संसार में यथार्थ गौरव पा सकता है और सब कामों को सफलता के

साथ कर सकता है; परन्तु वह मनुष्य योग्य नहीं जो अपने कामों को मन लगाकर दृढ़ता के साथ नहीं करता।

प्रसिद्ध अंग्रेज कवि वड्सवर्थ अपनी यात्रा के वर्णन में यों लिखता है—"जब आकाश में मेघ दीखते और मुझे पहाड़ के ऊपर जाना होता तो मैं अपने विचार से कुछ इस कारण पलट न जाता कि पहाड़ के ऊपर जाने पर यदि पानी बरसने लगेगा तो मुझे कष्ट होगा। वरन् यह सोचकर कि अपने विचार के अनुसार दृढ़ता के साथ कार्य न करने से मेरे चरित्र में धब्बा लगेगा, मैं आँधी-पानी की कुछ भी आशंका न करता और पहाड़ पर चला जाता।" यह कैसी बुद्धिमानी का विचार है। हम ऐसे संसार में नहीं रहना चाहते, जहाँ के मनुष्य थोड़ी-थोड़ी सी तुच्छ बातों से डर जायें, क्योंकि संसार में अगणित कठिनाइयाँ हैं जिनको दूर करके अपने काम के करने ही में बुद्धिमानी है।

एक समय एक मनुष्य एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़ने लगा। जब-जब वह उस स्थान के निकट पहुँचा जिसको उस पहाड़ की चोटी समझे हुए था या जहाँ तक जाने का उसका विचार था, तो उसको विदित हुआ कि मुख्य चोटी अभी दो मील ऊपर है और आगे का मार्ग बड़ा ऊँचा-नीचा और दोहड़ है, जिस पर थक जाने के कारण वह कठिनता से चल सकता था। पर यह कोई ऐसी बात न थी, जिससे वह पहाड़ी की चोटी तक न जा सके। सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि पहाड़ की चोटी पर कोहरा गिर रहा था और सूर्य के अस्त होने में केवल एक घण्टा था। यह देखकर वह शीघ्रता से नीचे उतर आया। पर देखो, दूसरे दिन वह क्या करता है? सवेरा होते ही वह पहाड़ पर चलने लगा और अन्त में उसकी मुख्य चोटी

पर जा बैठा। ऐसे ही मनुष्य जिस काम को अपने हाथ में लेते हैं, उसे पूरा करके छोड़ते हैं। इसलिए कभी किसी कठिनाई को देखकर तुम साहस को न छोड़ो, विशेषकर जब तुमने अभी इस काम का आरम्भ ही नहीं किया है।

एक लोकोक्ति है कि आरम्भ में सभी काम कठिन होते हैं और फिर जो काम जितना अच्छा होगा, उसका करना उतना ही कठिन होगा, और अच्छे काम ही करने योग्य होते हैं। इस संसार में, जहाँ पर परिश्रम प्रधान वस्तु है, दृढ़ और पक्का मन ही सब काम को कर सकता है। वह मनुष्य संसार में कभी सुखी नहीं हो सकता, जो पासे को इसलिए पटक देता है कि पहली बार पाँसा डालने में वह जीत नहीं सका।

अभ्यास

१. आलस्य और दृढ़ता में क्या अन्तर है, अपने शब्दों में समझाओ।
२. हम समय का सदुपयोग किस उपाय से कर सकते हैं?
३. कोई भी काम प्रारम्भ में कठिन क्यों लगता है?

व्याकरण

१. 'प्रसन्न' विशेषण है और 'प्रसन्नता' भाववाचक संज्ञा। इसी प्रकार नीचे लिखे शब्दों से भाववाचक संज्ञाएँ बनाओ :—
दृढ़, गुरु, सफल, शीघ्र, कठिन, बाल, छोटा।
२. इन समास पदों का विग्रह करो और समास-भेद बताओ :—
फल-फूल, प्रतिदिन, ऊँचा-नीचा, आँधी-पानी।
३. अपने अध्यापकजी से पूछो कि 'अन्त' का उल्टा शब्द बनाने के लिए 'अन' क्यों लगाया गया है (अन + अन्त = अनन्त), जबकि 'मूल्य' का उल्टा 'अमूल्य' है, 'द्वितीय' का 'अद्वितीय' और 'पार' का 'अपार'।

रचना

१. 'आलस्य हमारा शत्रु है' इस विषय पर निबन्ध लिखो।
२. निम्नलिखित का दो-दो वाक्यों में प्रयोग करो :—
आलस्य, दृढ़ता, गौरव, आशंका, विशेष, अनन्त, सचेत।

: २६ :

अमरवाणी

१. कम खाना और कम बोलना कभी हानि नहीं पहुँचाते।

२. आज का दिन हमारा है। बीता हुआ कल मर गया और आने वाला कल अभी पैदा नहीं हुआ।

३. जहाँ भी आप जायें अपने आत्मविश्वास को साथ लेते जायें।

४. 'उतावला सो बावला, धीरा सो गम्भीरा।'

५. शारीरिक परिश्रम करना मनुष्य का धर्म है। जो ऐसा नहीं करता, वह चोरी का अन्न खाता है।

६. न उधार दो न लो; क्योंकि उधार देने से प्रायः पैसा और मित्र दोनों खो जाते हैं। और उधार लेने से फिजूलखर्ची बढ़ती है।

७. हम उपदेश सुनते हैं मन-भर, देते हैं टन-भर और ग्रहण करते हैं कण-भर।

८. बुरे फौलाद से कभी अच्छा चाकू नहीं बनता।

९. भौंकते कुत्ते को ढेला मारो तो वह और भी ज्यादा भौंकने लगेगा। उसकी ओर कतई ध्यान न दिया जाय तो वह चुप हो जायगा।

१०. चापलूस उन बिल्लियों की तरह हैं जो सामने से चाटती हैं, और पीछे से खसोटती हैं।

११. अगर तू कोई चालाकी की बात करता है और मैं

तुझ से उसकी शिकायत नहीं करता, तो यह न समझ कि मैं बेवकूफ हूँ।

१२. मधु-मक्षिका की तरह गुलाब से मधु ले लो और काँटे छोड़ दो।

१३. जो अपने हिस्से का काम किये बिना ही भोजन पाते हैं, वे चोर हैं।

१४. मूर्खतापूर्ण और बुद्धिमतापूर्ण जवाब में वही फर्क है, जो घड़ी की सुइयों में है। एक बारह गुणा चलती है और दूसरी बारह गुणा दिखाती है।

१५. और किसी को चाहे तुम मत रोको, मगर अपनी जबान को लगाम दो; क्योंकि बेलगाम जबान बहुत दुःख देती है।

१६. साँप के दाँत में जहर होता है, मक्खी के सिर में जहर होता है, बिच्छू की पूंछ में जहर होता है, लेकिन दुर्जन के तमाम शरीर में जहर भरा होता है।

१७. दुष्टों और काँटों के दो ही इलाज हैं—या तो उनके मुँह को जूतों से कुचला जाय, या उनसे दूर रहा जाय।

१८. दुष्ट आदमी की बुद्धि खोटे काम करने में खूब तेज चलती है। उल्लुओं की दृष्टि अँधेरे में ही काम करती है।

१९. क्या आपके पचास दोस्त हैं ?—ये काफी नहीं हैं। क्या आपका एक दुश्मन है ?—यह बहुत ज्यादा है।

२०. तुमने पढ़ना तो सीख लिया, पर क्या पढ़ना चाहिए, इतना और सीख लो।

अभ्यास

१. दूसरी सूक्ति का क्या अभिप्राय है ?
२. मधु-मक्षिका से हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिए ?

३. दुर्जन के सारे शरीर में जहर कैसे होता है ?

व्याकरण

१. इनके विपरीतार्थक शब्द लिखो :—

दुष्ट, अँधेरा, ज्यादा, बहुत, तेज, दुःख, बेवकूफ, बैठना ।

२. 'कम खाता और कम बोलना हानि नहीं पहुँचाते ।' इस वाक्य में कम शब्द दो बार आया है । वे दोनों क्रिया-विशेषण हैं । ऐसे पांच क्रिया-विशेषण शब्द और लिखो ।

निर्देश

१. अपने अध्यापकजी से पूछिए कि हमें किस प्रकार की पुस्तकें पढ़नी चाहिए ।

२. आप जो भी पुस्तक पढ़ें, उसमें से इस प्रकार की सूक्तियों को एक कॉपी में लिखते रहिए ।

: ३० :

श्रवणकुमार

(१)

जननि जनक दोनों सोचते थे पड़े यों,
"अब तक जल लेके लाल आया नहीं क्यों ?
दिल धड़क रहा है, काँपता है कलेजा,
प्रिय सुत पर कोई आपदा आ पड़ी क्या ?"

(२)

तब तक नृप आये, और होके अधीर,
सविनय यह बोले "लें, पिये आप नीर।"
यह सुनकर चौंके और पूछा कि कौन ?
मम तनय कहाँ है, क्यों हुआ आज मौन ?

(३)

"नृप अवधपुरी का, आपका दास मैं हूँ,
वह सुरपुर में है, आपके पास मैं हूँ।
मृग-भ्रम कर मैंने बाण मारा अचूक,
मुनिवर, अब तो है हो गई घोर चूक।"

(४)

शर-सम श्रवणों में जा लगी भूपवाणी,
वे थर-थर काँपे, रो पड़े युग्म प्राणी,
प्रिय तनय हमारा जीवनाधार हाय !
हम अति निरुपायों का वही था उपाय।

(५)

जल गरल बना है पी चुके, पी चुके हैं,
वन अब न जियेंगे जी चुके, जी चुके हैं।
अब हम असहायों का रहा क्या सहारा ?
सुर-सदन सिधारा जीवनालम्ब प्यारा।

(६)

हम नयन विहीनों का सहारा वही था,
प्रिय लकुट बुढ़ापे का हमारा वही था।
अब तक यह पापी प्राण छूटे नहीं क्यों ?
नृप, हम पर तेरे बाण छूटे नहीं क्यों ?

(७)

निज धनुष उठा तू और संधान बाण,
झटपट पहुँचा दे प्राण के पास प्राण।
वह परम विवेकी पुत्र प्यारा जहाँ है,
वह दुख-दिवसों का इक सहारा जहाँ है।

(८)

व्रत गुरु-जन-सेवा पूर्ण पाले वही था,
हम अबल अपंगों को सँभाले वही था।
दुख कठिन उठाते जो न देता सहारा,
अब तक मर जाते जो न देता सहारा।

(९)

सुत, सुख तुमने क्या संग पाया हमारे,
निज प्रण कर पूरा प्राण दे के सिधारे।
विधि, हम अबलों के पिंड क्यों तू पड़ा है ?
कलुषि हृदय तेरा हाय कैसा कड़ा है ?

(१०)

तन बल बिसकाया नेत्र की ज्योति खोई,
दुख इस जगती में क्या रहा था न कोई ?
प्रिय सुत पर छोड़ा मृत्यु का बाण तूने,
हम दुख-दलितों के ले लिये प्राण तूने ।

(११)

वह विनय भरा था, वार तेरा कठोर,
वह सह सकता क्या, दे गया दुख घोर ।
वह सुमति सिधाई और सबानुरक्ति,
रति अटल पिता की, निश्चलता मातृभक्ति ।

(१२)

कब हम दुखियों से प्रीति पाली न तूने,
तिल भर तक आज्ञा, पुत्र टाली न तूने ।
सुत ! प्रिय सुत ! बेटा ! वत्स ! प्राणावलम्ब !
अति बिकल पिता है, खो रहा प्राण अब ।

(१३)

वह मधुमय वाणी जीवनी शक्तिपात्री,
फिर मम श्रवणों को दे सुना स्वर्गयात्री ।
प्रिय सुत आओ या बुला लो हमें भी,
अब इस भव बाधा से छुड़ाओ हमें भी ।

(१४)

हम परम अभागे भोगते आप पाप,
हतमति सुतघाती दें तुझे कौन शाप ।
किस विकट व्यथा से जा रहे आज प्राण,
जब प्रिय सुत छूटा तो रहा कौन त्राण ।

(१५)

"दशरथ ! शठ तेरा भी वही अन्त होवे,
सुत तज कर तू भी क्षुब्ध हो, प्राण खोवे।"
यह कह कर ज्योंही दीर्घ निश्वास छोड़ी,
फिर फिर न सकी जो सीप थी साँस छोड़ी।

(१६)

सुरपुर क्षण में ही ले गये स्वर्गदूत,
जननि-जनक पीछे अग्रगामी सपूत।
सुरगण अगवानी के लिए दौड़ आये,
श्रवण-तनय सेवा के गये गीत गाये।

(१७)

"जननि-जनक दोनों धन्य हैं ! धन्य लाल !"
कह कर सुर-बाला हो रही थीं निहाल।
घर-घर वसुधा में शोर था धन्य-धन्य,
सुत अनुग पिता का मातृ सेवा अनन्य।

अभ्यास

१. राजा दशरथ ने श्रवणकुमार को बाण क्यों मारा ?
२. श्रवण के अन्धे माता-पिता ने पानी पीने से इन्कार क्यों किया ?
३. उन्होंने श्रवण की इतनी बड़ाई क्यों की ?

व्याकरण

१. इस पाठ में तीन बार 'जननि' शब्द का प्रयोग हुआ है। वास्तव में शुद्ध शब्द है 'जननी'। कविता में ऐसा क्यों हुआ है, अपने अध्यापकजी से पूछिए।
२. थर-थर काँपना, सिर पड़ना, व्रत पालना, दिल धड़कना—इन मुहावरों का अर्थ बताकर वाक्यों में प्रयोग करो।
३. इन शब्दों के दो-दो पर्यायवाची शब्द लिखो :—
माँ, पिता, बेटा, जहर।

४. निम्नलिखित में सन्धि करो :—

जीवन + आधार, सेवा + अनुरक्ति, प्राण + अवलम्ब ।

रचना

१. इस कविता की कहानी को अपनी भाषा में लिखो ।

२. अनन्य, अनुग, सुलघाती, सिधाई, निरुपाय—इन शब्दों का अर्थ बतलाओ ।

: ३१ :

ये भाखड़ा की जीवित ईंटें

घुमक्कड़पन तो मेरे स्वभाव में है। इधर कई वर्षों से मैं घूम-घूम कर, देश में बन रहे बाँध, बड़े-बड़े कारखाने, जन-कल्याण-केन्द्र, देहाती स्कूल, अस्पताल—समझिए सभी चीजें देखता रहा हूँ। इनमें से कई को तो देख कर बड़ा प्रभावित भी हुआ हूँ। परन्तु इनके देखने का तात्पर्य केवल उनकी बाह्य रूपरेखा का परिचय पाना ही नहीं। मेरा यह भी उद्देश्य रहा है कि भारत के इन नये तीर्थों के निर्माण में, अपने श्रम का योग देकर, राष्ट्र-कल्याण का उत्तुङ्ग स्वर्ण-कलश लगाने वाले उन व्यक्तियों के भी दर्शन प्राप्त करूँ, जिन्होंने हजारों की संख्या में एकत्र होकर, ऊजड़-बीहड़ स्थानों को नंदन-कानन बना दिया है। साथ ही यह भी देखना था कि इस महान् कार्य को जिन्होंने रोजी कमाने का साधन-मात्र स्वीकार किया है, अथवा वे उस बाँध के द्वारा भविष्य में होने वाले महान् परिवर्तन के स्पन्दन से भी परिचित हैं, उसकी सफलता-असफलता में अपने को सहभागी मानते हैं या नहीं। मुझे यह भी ज्ञात करना था कि आया उन्हें यह पता है कि विभिन्न जातियों, धर्मों, भाषाओं और रहन-सहन से संकुल, इस विशाल राष्ट्र के अन्य लाखों लोग भी, उन्हीं की भाँति देश को समृद्ध और सम्पन्न बनाने के कार्य में प्राणपण से जुटे हुए हैं। संक्षेप में, मुझे यह देखना था कि नींव के पत्थर रखने वाले ये लोग भी क्या हमारी राष्ट्रीय योजनाओं से उत्साहित हुए हैं या नहीं।

परन्तु जितनी सरलता से मैंने इन प्रश्नों का उत्तर पाने की अपेक्षा की थी, काम उतना सरल नजर नहीं आया; क्योंकि श्रमिक अपने विषय में बात करने में अनिच्छा प्रकट करते हैं। वे बड़े-से-बड़ा कार्य कर जाने पर भी उसका श्रेय लेने में हिचकिचाते हैं। पर कहीं-कहीं तो उनकी सफलता ही उनके विषय में सारी बातें प्रकट कर देती है। इसी प्रकार मैं घूमते-घामते भाखड़ा-नांगल जा पहुँचा। यहाँ आकर मैंने जो कुछ देखा, सुना और समझा, वह वर्णनातीत है। मुझे ऐसा लगा कि मैं किसी एक साधारण मजदूर से नहीं, बल्कि किसी महान् साहसिक वीर सेनापति से मिल रहा हूँ। दो-एक उदाहरणों से मेरे इस कथन का तात्पर्य स्पष्ट हो जायेगा।

यहाँ के एक श्रमिक हैं दुर्गादास। भाखड़ा के निर्माण का कार्य जब से प्रारम्भ हुआ, तब से आप यहाँ काम में लगे हुए हैं। आपने एक साधारण कुली के रूप में इस विशाल योजना में इकाई बन कर कार्य करना आरम्भ किया। आप एक गरीब पंजाबी किसान-परिवार के हैं। परिवार में छः भाई हैं। इन सब के बीच जीवनोपार्जन का एकमात्र साधन था छोटा-सा भूमि का टुकड़ा। सभी भाई अशिक्षित एवं गरीब हैं। उनमें से तीन भाई भाखड़ा आये और कुली के रूप में कार्य करने लगे। लगातार १३ वर्ष काम करने के पश्चात भी वे अपनी योग्यता एवं क्षमता अधिक नहीं बढ़ा सके। केवल दुर्गादास ही सुपरवाइजर के पद तक पहुँचे। किस प्रकार वे उन्नति करते-करते इस पद तक पहुँच सके, यह भी एक छोटा-मोटा महाकाव्य है।

प्रारम्भ के दिनों में मिट्टी खोदने, पृथ्वी के भीतर दबी विशाल चट्टानों तथा सुरंग के रास्ते में आने वाले पर्वतों को

तोड़ने का कार्य अधिक करना पड़ा था। दुर्गादास को इसी खतरनाक कार्य पर नियुक्त किया गया। सतलज नदी की सूखी तलहटी में बन रहे इस बाँध के कार्य में दो विशाल सुरंगें खोदनी थीं—संसार की सबसे लम्बी सुरंगें। उन्हीं को खोदने का काम सबसे पहले आरम्भ किया गया। सतलज का पानी इन्हीं के द्वारा निकालना था। भाखड़ा के पार्श्व में खड़े हिमालय को देखते ही पता लग जायगा कि यह कार्य कितना खतरनाक है। वहाँ की चट्टानें कठोर न होकर शिथिल, कोमल एवं परतदार हैं। थोड़े दबाव से ही वे टूट जाती हैं। पहाड़ी सड़कों पर हल्की-से-हल्की गाड़ियों के चलने से बड़ी-बड़ी चट्टानें और पर्वत-खण्ड गिर पड़ते हैं। ऐसी हालत में इंजीनियरों के सम्मुख वास्तविक समस्या बाँध के निर्माण की नहीं, बल्कि बाँध की ५५ मील की पूरी लम्बाई में पड़ने वाले इन पर्वतों और चट्टानों को सुदृढ़ करने की थी। इसलिए प्रति घण्टे ४०० टन सीमेंट इन पर्वतों में डाली जाने लगी, ताकि ये सुदृढ़ और टिकाऊ बन जायें और जल के भीषण दबाव को सह सकें।

वहाँ पर कार्य करने वाले ८,००० मजदूरों को इस खतरे की पूरी जानकारी थी। दुर्गादास तथा उनके साथियों को भी यह बात भली-भाँति मालूम थी। वे दिन-प्रतिदिन चट्टानों को उड़ाते-तोड़ते सुरंग की गहराई में घुसते चले जा रहे थे, जहाँ पर घोर अन्धकार का साम्राज्य छाया था। उन्हें इस बात का हमेशा डर बना रहता था कि किसी भी समय ये दानवी चट्टानें उनके सिर पर टूट सकती हैं। बात भी कुछ ऐसी हुई कि उनके भय ने एक दिन वास्तविकता का रूप धारण कर ही लिया।

एक दिन प्रातःकाल जब दुर्गादास अपने साथियों के साथ एक चट्टानी दीवार में ड्रिल मशीन से खुदाई कर रहे थे, तो अचानक ऊपर की छत टूट पड़ी और वह विशाल पर्वत खिसक कर नीचे आ गया। दुर्गादास को अपने साथियों सहित एक छोटे-से स्थान में मानो जीवित समाधि मिल गयी। वहाँ न था प्रकाश, न पीने को पानी, न खाने का भोजन। और तो और, साँस लेने को स्वच्छ हवा तक भी नहीं थी। सबसे बड़ी आफत यह थी कि समय रहते कोई सहायता भी मिलनी असम्भव थी, क्योंकि बाहर निकलने का रास्ता बन्द हो गया था।

उस संकटपूर्ण घड़ी की कल्पना-मात्र से हृदय काँप उठता है। फिर जिन पर यह दुर्घटना घटी उनकी क्या मनोदशा हुई होगी। कितने तो बच्चों की भाँति फूट-फूट कर रोने लगे। कितने ही इस आशंका से अधमरे हो गये कि स्वच्छ हवा न मिलने से सब-के-सब दम घुट कर यहीं पर मर जायेंगे।

परन्तु मौत की उस भयानक छाया में भी दुर्गादास की बुद्धि ने अद्भुत चमत्कार दिखाया। उन्होंने अपने साथियों को पुकार-पुकार कर एकत्रित किया और बाहर निकलने के लिए उद्बोधित किया। दुर्गादास को इस बात की पूर्ण आशा थी कि अपनी कोशिश से यदि बाहर न भी निकल पाये, तो भी हमें बचाने के लिए आते हुए साथियों से आधे रास्ते मुलाकात हो ही जायेगी। इस प्रकार दुर्गादास अपने साथियों सहित तीन दिन तीन रात निरन्तर मृत्यु से संघर्ष करते रहे—बिना खाये, बिना पिये, बिना ताजी हवा के। वे खोदते रहे पर्वत को, जो उनका मार्ग अवरुद्ध किये हुए था।

उधर बाहर भी साथियों को दुर्घटना का पता लग गया

था। वे भी जी-जान से लगातार ७२ घण्टे तक उन चट्टानों को तोड़ने के बाद दुर्गादास और उनके साथियों को मृत्यु के जबड़े से छीनने में सफल हो सके।

किसी को यह आशा नहीं थी कि ये लोग इस जीवित समाधि से बाहर निकाले जा सकते हैं। यह तो दुर्गादास के अपार साहस का परिणाम था जो सब-के-सब जीवित और सकुशल फिर इस दुनिया में आ सके। इस वीरता के लिए दुर्गादास को पुरस्कृत भी किया गया।

इस दुर्घटना के कटु अनुभव ने दुर्गादास को जरा भी विचलित नहीं किया। उसके बाद भी वे उसी कार्य को कर रहे हैं और तब तक करते रहेंगे जब तक बाँध बन कर पूरा न हो जायेगा। भाखड़ा तो दुर्गादास के जीवन का एक अंग बन गया है। योजना का सब काम समाप्त हो जाने पर, जब वे यहाँ के कार्य से विश्राम लेंगे, तब भी उनका सम्बन्ध भाखड़ा से बना रहेगा, क्योंकि दुर्गादास को हिसार जिले में कुछ जमीन दी गयी है, जिसकी सिंचाई भाखड़ा के ही जल से होगी।

दुर्गादास कहा करते हैं—'यह तो मेरे शेष जीवन के लिए पेंशन के रूप में होगा, क्योंकि मैंने अपने जीवन का सर्वोत्तम समय भाखड़ा को दिया है। अब भाखड़ा की बारी होगी कि मेरी बुढ़ौती में वह मेरे खेतों को सींच कर उसका मुआवजा मुझे चुकाये।'

× × ×

इसी तरह की कहानी अजीतसिंह की भी है, जो एक सी-४ मैरियन शावेल मशीन पर फोरमैन का काम करते हैं। अगर पर्वत ने दुर्गादास को जीवित समाधि देने की सोची, तो

उसने अजीतसिंह को उनकी मशीन सहित चूर-चूर कर देने की कोशिश भी की।

भाखड़ा की वह संकीर्ण घाटी, जहाँ पर ७४० फुट ऊँचा बाँध खड़ा किया गया है, बड़ी ही कातिल है और खून की प्यासी है। न जाने कितने श्रमिकों ने इस भयंकर ऊँचाई से गिर-गिर कर जानें गँवायी हैं। जब मैंने उस पर चढ़ कर नीचे झाँकने का प्रयत्न किया तो मुझे ऐसा लगा कि अब गिरा तब गिरा। फिर भी, उस सँकरे मार्ग पर काम करने वाले ऐसे ड्राइवर भी थे, जो बड़ी निर्भीकता से अपना काम किये जा रहे थे, जैसे वे कहीं मैदान में काम कर रहे हों।

एक दिन प्रातःकाल जब अजीतसिंह ने चाय पीने के लिए थोड़ी देर के लिए काम रोका, पड़ोस की पहाड़ी में जोर का एक धमाका हुआ। अजीतसिंह की वह एक लाख रुपये की कीमत की मैरियन शावेल जिस चट्टान पर खड़ी थी, उसका आधार शिथिल पड़ गया, उसमें बड़ी-बड़ी दरारें पड़ गईं। ऐसा लगता था कि किसी भी क्षण उस पहाड़ी का हिस्सा, अजीतसिंह तथा उनकी मशीन को साथ लेकर, नीचे चला आयेगा और फिर मशीन का नामोनिशान तक बाकी न रह जायेगा। आस-पास काम करने वाले आदमी प्राण लेकर भाग खड़े हुए, परन्तु अजीतसिंह निर्भय, निःशंक वहीं खड़े रहे। वह मशीन तो उनका शरीर और प्राण बन चुकी थी। अपने स्त्री-बच्चों को मरते देखना शायद उनके लिए सह्य था, परन्तु इस मशीन को नष्ट होते वे कभी नहीं देख सकते थे। अपने प्राणों की तनिक भी परवाह किये बिना वे उस झूलती हुई पहाड़ी तक गये, मैरियन शावेल को स्टार्ट किया और मृत्यु के मुख में से उस मशीन को निरापद और सुरक्षित स्थान पर ले आये।

कुछ ही क्षणों के पश्चात् पर्वत का वह सारा हिस्सा, जहाँ अजीतसिंह की मैरियन शावेल खड़ी थी, भयानक चीत्कार करता नीचे जा गिरा। उसकी भयंकर ध्वनि से वहाँ का सारा पर्वतीय अंचल न जाने कितनी देर तक गूँजता रहा। यह भीषण काण्ड अजीतसिंह के देखते-देखते हो गया, मानो पहाड़ मशीन के वहाँ से हटाये जाने की ही प्रतीक्षा कर रहा था। वे तो पागल-से हो गये और अपनी मशीन की स्टीयरिंग पकड़ कर लिपट गये और रो-रोकर कहने लगे—'तुझे मौत के मुँह में जाते देख कर मैं पागल हो गया था। अगर तू आज समाप्त हो गई होती, तो तेरे साथ मैं भी मर जाता।'

× × ×

भाखड़ा के निर्माण-कार्य में लगे ८,००० व्यक्तियों में से मैंने केवल दो व्यक्तियों की ही वीरता की कहानी सुनाई है। परन्तु वहाँ तो सभी के साथ किसी-न-किसी प्रकार ऐसी ही कहानियाँ जुड़ी हुई हैं। मैं ऐसे कितने ही व्यक्तियों को जानता हूँ, जो कारखानों तथा प्रयोगशालाओं में अपनी टेबल पर बैठे-बैठे ही बड़ी लगन और समर्पण की भावना से कार्य कर रहे हैं। मैं ऐसे एक और फोरमैन को जानता हूँ—उनका नाम है अच्छरसिंह—जिन्होंने वहाँ हजारों मजदूरों को शिक्षित किया है।

जैसा कि यहाँ के प्रमुख इंजीनियर श्री स्लोकम ने स्वयं स्वीकार किया है, यह बाँध संसार में सबसे बड़ा है और उनके जीवन का यह महान् कार्य है। आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि पाकिस्तान में बन रहे वार्सिक बाँध में ८०० कुशल विदेशी इंजीनियर कार्य कर रहे हैं, जबकि वह बाँध हमारे भाखड़ा का चौथाई भाग मात्र है। कार्य को इतना सुगम तथा

व्यक्तियों को योग्य बनाने का कार्य अच्चरसिंह का रहा है, जिन्होंने पहले स्वयं काम सीखा और फिर हजारों व्यक्तियों को तैयार किया। आज वे भाखड़ा के निर्माण में एक सुदृढ़ स्तम्भ हैं। अगर वे न होते, तो संसार के इस विशालतम बाँध पर हमें भी सैकड़ों विदेशी कुशल इंजीनियर रखने पड़ते।

भाखड़ा न केवल संसार का सबसे बड़ा बाँध है, बल्कि बाँध-निर्माण-कला के प्रशिक्षण का एक विशाल विश्वविद्यालय भी है। यहाँ पर काम सीखे हुए कुशल कार्यकर्ता भविष्य में बनने वाले न जाने कितने बाँधों के निर्माण में सहयोग दे सकेंगे।

अभ्यास

१. इस पाठ का नाम 'ये भाखड़ा की जीवित ईंटें' क्यों रखा है, जबकि ईंटों में जीवन नहीं होता है ?
२. भाखड़ा बाँध कहाँ है और उसका क्या लाभ है ?
३. दुर्गादास ने अपनी और अपने साथियों की जान कैसे बचाई ?
४. इस पाठ से हमें क्या प्रेरणा मिलती है ?

व्याकरण

१. इस पाठ में आये निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद करो :—
जीवनोपार्जन, प्रारम्भ, वर्णनातीत, हिमालय, उद्‌बोधित, सर्वोत्तम।

२. पुष्पांकित पदों को ध्यान से पढ़ो और निम्नांकित तालिका में संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण आदि भरो :—

मैं* स्वभाव* से घुमक्कड़* हूँ। कई* वर्ष देश* में घूमा। बड़ा* कारखाना* देखा। भारत* का यह* नया* तीर्थ* है। वे* श्रेय* लेने से हिचकिचाते हैं। परिवार* में छह* भाई* हैं। तेरह* वर्ष काम करने के पश्चात् भी वे* अपनी*

योग्यता* एवं क्षमता* नहीं बढ़ा सके। दुर्गादास* को इसी खतरनाक* कार्य* पर लगाया गया।

संज्ञा	सर्वनाम	विशेषण

३. नीचे लिखे अशुद्ध शब्दों के शुद्ध रूप लिखो :—
निर्माण, स्वच्छ, उद्देश, स्वर्ण-कलश, संबंध।

: ३२ :

अजन्ता और एलोरा

हजारों साल पहिले हमारे देश में पहाड़ काटकर मन्दिर बनाने की प्रथा चल पड़ी थी। तब से सैकड़ों गिरि-मन्दिर भाजा, कार्ले, कन्हेरी, नासिक, बरार आदि में बनते रहे। मनुष्य की बनाई भारतीय गुफाओं में अजन्ता की गुफाएँ शायद सबसे पुरानी हैं। एलोरा, एलिफेंटा आदि की गुफाएँ सबसे बाद की है।

बम्बई और हैदराबाद के बीच नंगे पहाड़ों की एक माला उत्तर से दक्षिण तक चली गई है। उसे सह्याद्रि पर्वतमाला कहते हैं। अजन्ता के गुफा-मन्दिर उसी पर्वत माला में हैं। उन्हीं के पास ही थोड़ी दूर पर वाघुर नदी पहाड़ों के पैर में साँप सी लिपट कर कमान की तरह मुड़ गई है। यहाँ सह्याद्रि पर्वतमाला यकायक आधे चाँद जैसी बन गई है। यहाँ ऊँचाई कोई ढाई सौ फीट है। हरे-भरे वन के बीच एक पर एक सजाये गये मंच की तरह ऊँची उठती हुई यह पर्वतमाला हमारे पुरखों को भा गई। उन्होंने पहाड़ काट कर खोखले किये, फिर उनमें सुन्दर भवन बनाये और उन भवनों के खम्भों पर विहँसती हुई मूर्तियाँ उभारीं। इतना ही नहीं, भवनों के भीतर की दीवारें और छतें भी रगड़ कर चिकनी कीं और उनकी सतह पर चित्रों की एक दुनिया बसा दी। दूर-दूर तक इन चित्रों की सुन्दरता की धूम मच गई। पर समय ने पलटा खाया। अजन्ता और उनको जीवन देने वालों का युग खत्म हो गया। जंगल ने गुफाओं को चारों ओर से ढक लिया। पास

रहने वाले भी भूल गये कि वे एक महान् कलामण्डप के निकट बसते हैं।

अजन्ता के भित्ति-चित्र का एक नमूना

आज से कोई अस्सी साल पहले पुराने हैदराबाद राज्य में

अजन्ता के पास अंग्रेजी सेना की एक टुकड़ी ठहरी थी। एक दिन उसका एक कप्तान शिकार के पीछे घोड़ा दौड़ाता उधर निकला, तो सहसा उसकी नजर सीढ़ियों के एक सिलसिले के ऊपर चित्रों से भरे भवनों की पंक्ति पर टिकी। वह घोड़े से उतर कर एक भवन में घुसा। बरामदे और हाल की दीवारों पर छाई हुई छटा को देखकर वह ठगा-सा रह गया। उसी कप्तान की बदौलत संसार ने अजन्ता की गुफाओं को फिर से पाया।

अजन्ता की गुफाओं की दीवारों पर गुमनाम कलाकारों ने जीवन की सारी भिन्नताएँ दिखलाकर कूँची और छैनी की जबानी जीवन के समूचेपन की कहानी पेश की है। कहीं बन्दरों की कहानी है, तो कहीं हाथियों और हिरनों की। कहीं क्रूरता और भय की कहानी है, तो कहीं दया और त्याग की। जहाँ पाप दरसाया गया है, वहाँ क्षमा का सोता भी छूट रहा है। कलाकारों ने राजा और कंगाल, विलासी और भिक्षु, नर और नारी, मनुज और पशु, सभी के चित्रों से गुफाओं को सजाया है। उन चित्रों में महात्मा बुद्ध का जीवन हजार धाराओं में होकर बहता है।

बुद्ध कहीं हाथ में कमल लिये खड़े हैं और उनके उभरे नयनों की ज्योति मन्द-मन्द धारा की तरह आगे को फैलती जा रही है। और पास ही उसी तरह कमलनाल धारण किये यशोधरा त्रिभंग में खड़ी है। फिर यशोधरा और राहुल के चित्र हैं—भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के, अलग-अलग भावनाओं के। उनमें से एक 'महाभिनिष्क्रमण' का चित्र। उस समय का चित्र जब गौतम सदा के लिए संसार की माया से नाता तोड़ कर घर छोड़ रहे हैं। यशोधरा और राहुल नींद में खोये हुए

भी गौतम के गृह-त्याग पर जैसे अपने धड़कते हुए हृदयों को सँभाले हुए हैं। बालक राहुल के साथ यशोधरा का एक और चित्र वह है, जब बुद्ध पति की तरह नहीं भिखारी की तरह यशोधरा के दरवाजे पर आते हैं और भिक्षा-पात्र को आगे बढ़ा देते हैं। यशोधरा का जीवन-धन भिखारी बनकर आया है! वह क्या दे, क्या न दे? वह महाभिक्षु तो सोना-चाँदी, मणि-माणिक्य, हीरा-मोती को मिट्टी के मोल भी नहीं गिनता। पर नहीं, उसके पास कुछ है, जो हीरा-मोती से भी कहीं अधिक मूल्यवान् है। उसका एकमात्र लाल, उसके कलेजे का टुकड़ा राहुल! और वह झट राहुल को बुद्ध की ओर बढ़ा देती है। चित्रकार ने जैसे उस घड़ी में यशोधरा के खुशी से मगन रूप को अपनी रेखाओं में बाँध लिया है।

अजन्ता के गुफा-मन्दिरों में बुद्ध के पिछले जन्मों की कथाओं के भी चित्र मौजूद हैं। बुद्ध के पिछले जन्म की कथाओं को "जातक" कहते हैं। जातक कथाएँ कुल ५५५ हैं, और जिस पुस्तक में उन्हें संग्रह किया गया है, उसे भी "जातक" ही कहते हैं। जातकों के अनुसार बुद्ध अपने पिछले जन्मों में हाथी, बन्दर, हिरन आदि के रूप में कई योनियों में पैदा हुए थे और संसार के कल्याण के लिए दया और त्याग का आदर्श कायम करके बलिदान हो गये थे। बुद्ध के पूर्व जन्म के चित्रों में यह बड़ी खूबसूरती के साथ दिखाया गया है कि उस समय पशुओं तक ने उचित राह पर चलने में किस प्रकार कष्ट सहे और त्याग किये।

अजन्ता में लगभग २९ गुफाएँ हैं, जो २५० फुट ऊँचे सीधे खड़े पहाड़ को हाथ से काटकर बनाई गई हैं। उनके बनाने में कितना समय, कितनी मेहनत, कितना धन लगा

होगा. इनका कुछ अनुमान इन गुफाओं को देख कर किया जा सकता है, जो पूरी नहीं बन पाई हैं। शायद किसी राजनीतिक उथल-पुथल के कारण कला के उस अद्भुत संसार की रचना बन्द हो गई होगी और कुछ गुफाओं को अधूरी ही छोड़कर उनके सिरजनहार अपनी राह चले गये होंगे। कुल २९ गुफाओं में २४ विहार और ५ चैत्य हैं। विहार एक प्रकार के मठ होते थे, जिनमें बौद्ध भिक्षु रहा करते थे। चैत्य एक प्रकार के मन्दिर थे, जिनमें पूजा के लिए स्तूप या बुद्ध की मूर्ति स्थापित होती थी।

अजन्ता के गुफा-मन्दिरों के बाहर बरामदे की दीवारों में मेहराबनुमा खिड़कियाँ हैं, जो भीतर रोशनी पहुँचने के लिए बनाई गई थी। उन खिड़कियों की बनावट लकड़ी की खिड़कियों जैसी है, और उनके बाहर और भीतर बुद्ध की अनेक मूर्तियाँ बनी हुई हैं। वे मूर्तियाँ असाधारण रूप से सुघर हैं। फिर भी उनकी सुघरता उभर नहीं पाती। चित्रों की सुन्दरता उसे दबा लेती है, क्योंकि अधिकतर गुफा-मन्दिरों की दीवारों पर और छतों पर भी एक से एक सुन्दर चित्र छाये हुए हैं।

अजन्ता की गुफाओं का निर्माण ईसा से करीब दो सौ साल पहिले शुरू हो गया था, और कोई नौ सौ साल तक चलता रहा। यानी सातवीं सदी तक वे गुफाएँ बनकर तैयार हो चुकी थीं। एक-दो गुफाओं में लगभग दो हजार साल पुराने चित्र भी सुरक्षित हैं। पर अधिकतर चित्र पाँचवीं और सातवीं सदी के ही बने हैं। पहिली गुफाओं और पहिले चित्रों के बनने के समय अजन्ता और दक्षिण भारत में आन्ध्र सातवाहनों का राज्य था और आखिरी गुफाओं और चित्रों के समय चालुक्यों का। चालुक्यों के दरबार में ईरान के बादशाह खुसरू द्वितीय ने

राजदूत भेजे थे। फलतः अजन्ता में ईरानी लोगों का चित्र भी आँक दिया गया। उनने पुराने युग में जितने अधिक और जैसे जीते-जागते, चलते-फिरते से चित्र अजन्ता में बने वैसे और कहीं नहीं बने।

एलोरा अजन्ता से लगभग ३२ मील दूर औरंगाबाद जिले में है। जैसे अजन्ता के चित्रों की खूबी बेमिसाल है, वैसे ही एलोरा की मूर्तियों की कारीगरी बेजोड़ है। पर इसका यह अर्थ नहीं कि एलोरा की दीवारों पर चित्रकारी है ही नहीं। जैसे अजन्ता में मूर्तियों के होते हुए भी प्रधानता चित्रों की है, वैसे ही चित्रों के बावजूद एलोरा में प्रधानता मूर्तियों और बेल-बूटों की है।

एलोरा के मन्दिरों की संख्या तीस से ऊपर है। वे मन्दिर लगभग बारादरी के नमूने पर दो-दो तीन-तीन मंजिलों में कटे हुए हैं, जबकि अजन्ता की गुफाएँ एक ही तल की हैं और एक ही नजर में वहाँ की खूबसूरती समेटी जा सकती है। यों तो ठोस पहाड़ को काटकर एक मंजिल के भवन बनाना भी कुछ आसान काम नहीं है, पर उसे काटकर उसमें दो और तीन मंजिल की इमारतें बनाना तो बहुत ही बिरते का काम है।

अजन्ता के चैत्य और विहार बौद्धों के हैं, पर एलोरा में बौद्ध, हिन्दू और जैन तीनों धर्मों के विहार और मन्दिर मौजूद हैं। उनमें एक चैत्य और ग्यारह विहार बौद्धों के हैं, सत्रह हिन्दू मन्दिर हैं और बाकी जैन। भारत में धर्मों और सम्प्रदायों की विविधता हमेशा रही है, पर कलाकारों ने कला के सृजन में हिन्दू, बौद्ध आदि के भेद कभी नहीं किये। एक ही कला-रूप का विकास होता रहा, और बौद्ध, हिन्दू, जैन सभी कलाकार उसका समान रूप से व्यवहार करते रहे। उनके अधिकतर

देवता भी समान हैं। यही कारण है कि एलोरा में तीनों सम्प्रदायों के मन्दिरों की रचना में एक ही कला-रूप अपनाया गया है। उनमें एक ही प्रकार के कटाव अपने भिन्न-भिन्न रूपों में बरते गये हैं। मोटे चिकने चमकते हुए खम्भों पर

एलोरा के कैलाश मन्दिर का चित्र

इतने सुन्दर और अनन्त बेलबूटे काटे गये हैं कि देखकर अचरज होता है। ऐसे सुन्दर खम्भे भारत के दूसरे गुफा-मन्दिरों में और कहीं देखने में नहीं आते।

एलोरा के मन्दिर लगभग तीन सौ वर्ष में राष्ट्रकूट राजाओं के समय में बने थे, जिन्होंने छठी सदी से लेकर लगभग नवीं

सदी तक राज्य किया था। अकेला कैलाश मन्दिर लगभग १०० साल में बना। दशावतार मन्दिर संगतराशी का अद्भुत नमूना है, जिसमें विष्णु के दसों अवतारों की अत्यन्त सुन्दर मूर्तियाँ बनी हुई है।

परन्तु एलोरा के मन्दिरों का मुकुटमणि तो कैलाश मन्दिर ही है, जिसमें शिव की भव्य मूर्ति विराज रही है। संसार में चट्टान काटकर सैकड़ों मन्दिर बनाये गये हैं, पर कैलाश के जोड़ का मन्दिर कहीं नहीं बना। पहाड़ की कोख से तीस लाख हाथ पत्थर निकालकर एक इतनी विशाल दुमंजिली इमारत गढ़ दी गई है, जिसमें मय अपने हाते के समूचा ताजमहल रख दिया जा सकता है। आदमी के पौरुष का इतना बड़ा सबूत और कहीं देखने में नहीं आता। शिव के मन्दिरों में आमतौर पर सुराखदार घड़े लटका दिये जाते हैं, ताकि शिवलिंग पर निरन्तर जल की बूंदें टपकती रहें। पर कैलाश के कलाकारों को ऐसी मामूली कल्पना नहीं भाई। उन्होंने इंजीनियरी का ऐसा चमत्कार दिखाया कि आज के बड़े-बड़े इंजीनियर भी उसे देखकर दाँतों तले उँगली दबा लेते हैं। कैलाश मन्दिर गढ़ने वालों ने दूर बहती एक नदी की धारा को मोड़ दिया और पहाड़ों के अन्दर ही अन्दर उसे इस प्रकार शिवलिंग पर सरका लाये कि आज हजारों साल बीतने के बाद भी मूर्ति पर निरन्तर जल टपकता रहता है। उस मन्दिर में चट्टानों को काटकर समूचे के समूचे हाथी खड़े कर दिये गये हैं। इसी प्रकार काल भैरव, काली और शिवजी के भिन्न-भिन्न गणों की भयानक और डरावनी मूर्तियाँ भी गढ़ी गई हैं, जो एक से एक सजीव और जीती-जागती दिखाई देती हैं।

एलोरा के हिन्दू गुफा-मन्दिरों में दो और मन्दिर बहुत महत्त्व के हैं, एक में शंकर का ताण्डव नृत्य और दूसरे में रावण के कैलाश पर्वत उठाने का दृश्य बड़ी सुन्दरता से उभारा गया है। शिव के ताण्डव नृत्य में असाधारण वेग दिखलाकर जैसे पत्थर में प्राण फूंक दिए गए हैं। उसी प्रकार असीम शक्ति और महान् परिश्रम के संयोग से रावण के रूप में से जैसे एक अद्भुत ओज फूट रहा है। लगता है जैसे कैलाश पर्वत की चूलें ढीली हो गई हैं और सृष्टि उलट-पलट होने वाली है।

अजन्ता और एलोरा के मन्दिर संसार के गुफा-मन्दिरों में बेमिसाल हैं।

अभ्यास

१. अजन्ता के गुफा-मन्दिर किस प्रदेश और किस पर्वतमाला पर हैं ?
२. अजन्ता के गुफा-मन्दिरों का पता कैसे लगा ?
३. इन गुफा-मन्दिरों का निर्माण कब और कितने समय में हुआ ?
४. एलोरा में प्रमुख मन्दिर कौन-सा है ?
५. कैलाश मन्दिर में मूर्ति पर जल टपकाने की क्या व्यवस्था की गई है ?

व्याकरण

१. नीचे लिखे शब्दों को पढ़कर तालिका में यथास्थान भरो :—

तब, शायद, है, और, बिना, उनकी, भवन, भूल

विकारी	अविकारी

रचना

१. पर्यायवाची लिखो :—

साल, शायद, यकायक, पुरखों, खत्म, नजर, गुमनाम, खुशी, खूबसूरती, ज्यादातर ।

२. किसी आँखों देखे दर्शनीय स्थान का वर्णन अपनी कापी में लिखो ।

: ३३ :

सिकन्दर और पुरु

[स्थान—महाराज पुरु का दरबार। समय—दोपहर]

[महाराज पुरु सिंहासन पर बैठे हैं। राज-दरबारी अपनी-अपनी जगह पर हैं। महाराज के पास जरा नीचे की चौकियों पर राजकुमार अमर और समर बैठे हैं। सामने एक ऊँची जगह पर सरिता, प्रार्थना और रुक्साता बैठी हैं। वह सब को देख सकती हैं, उन्हें कोई नहीं देख सकता।]

दरबारी—(एक साथ) पुरुराज की जय! पुरुराज की जय!

प्रधान—यूनान के महाराज सिकन्दर का राजदूत महाराज की सेवा में सिकन्दर का सन्देशा लेकर आया है, और अन्दर आने की आज्ञा माँगता है।